CHAPTER-13

(क्षेत्र से यज्ञ योग)

अर्जुन उवाच ।
प्रकृतिं पुरुषं चैव क्षेत्रं क्षेत्रज्ञमेव च ।
एतद्वेदितुमिच्छामि ज्ञानं ज्ञेयं च केशव ॥
Arjuna uvāca **/**
Prakṛtiṃ puruṣaṃ caiva kṣetraṃ kṣetrajñameva ca **/**
Etadveditumicchāmi jñānaṃ jñeyaṃ ca keśava **//**

अर्जुन ने कहा:
केशव, मैं जानना चाहता हूँ कि प्रकृति और पुरुष क्या है? क्षेत्र, क्षेत्रज्ञ और ज्ञान क्या हैं?
Arjuna Says:
Keshava, I wish to know the distinctive nature of Prakrti and Purusha, Kshetra and Kshetrajna, knowledge and what ought to be known.

श्रीभगवानुवाच ।
इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते ।
एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः ॥ १३-१॥
Śrībhagavānuvāca **/**
Idaṃ śarīraṃ kaunteya kṣetramityabhidhīyate **/**
Etadyo vetti taṃ prāhuḥ kṣetrajña iti tadvidaḥ **//** *13-1* **//**

भगवान कृष्ण बोले:
हे कौंतेय, यह शरीर क्षेत्र कहा जाता है। और इस क्षेत्र को जो जानता है, उसको विद्वान् लोग क्षेत्रज्ञ कहते हैं।
Shri Bhagawan Says:
Kaunteya, this body is called ‘the field’, and that who knows that it is the field, that is called 'Kshetrajna', the knower. Those who know (the field and the knower both) say so.

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत ।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम ॥ १३-२॥
Kṣetrajñaṃ cāpi māṃ viddhi sarvakṣetreṣu bhārata **/**
Kṣetrakṣetrajñayorjñānaṃ yattajjñānaṃ mataṃ mama **//** *13-2* **//**

हे भारत, मुझे ही सब क्षेत्रों में क्षेत्रज्ञ समझो। क्षेत्र क्षेत्रज्ञ का जो ज्ञान है वह ही सच्चा ज्ञान है। मेरा ऐसा मत है।

Know that I am the Kshetrajna, O Bharata, in all the fields of the world. And the knowledge of 'Kshetra'and 'Kshetrajna', that is the real knowledge, according to me. (Here it has to be understood that there is the individual Kshetra and Kshetrajna and there is the cosmic Kshetra and Kshetrajna).

तत्क्षेत्रं यच्च यादृक्च यद्विकारि यतश्च यत् ।
स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे शृणु ॥ १३-४॥
Tatkṣetraṃ yacca yādṛkca yadvikāri yataśca yat **/**
Sa ca yo yatprabhāvaśca tatsamāsena me śṛṇu **//** *13-3* **//**

वह क्षेत्र क्या है, कैसा है, क्या इसके विकार हैं, वे क्या हैं, और कैसे हैं। वह क्षेत्रज्ञ भी जो है क्या उसका प्रभाव या शक्ति है, यह सब संक्षेप में मुझसे सुनो:

That Kshetra, what it is, of what nature and character it is, what are its mutations and whereby are they, (what is the Kshetrajna) and what are the powers and effects of it, listen all this in brief.

ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक् ।
ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः ॥ १३-४॥
Ṛṣibhirbahudhā gītaṃ chandobhirvividhaiḥ pṛthak **/**
Brahmasūtrapadaiścaiva hetumadbhirviniścitaiḥ **//** *13-4* **//**

यह क्षेत्र, क्षेत्रज्ञ, ज्ञान, ऋषियों द्वारा वद के छन्दों में विविध प्रकार से पृथक पृथक गाया गया है। ब्रह्म सूत्र के पदों में भी निश्चित सूत्रों में कारण समेत यह ज्ञान दिया गया है।

Sung and celebrated it is in many ways by seers, by all the Vedas together and in details, and by Brahmasutras with reasons in definite style.

महाभूतान्यहङ्कारो बुद्धिरव्यक्तमेव च ।
इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः ॥ १३-५॥
Mahābhūtānyahaṅkāro buddhiravyaktameva ca **/**
Indriyāṇi daśaikaṃ ca pañca cendriyagocarāḥ **//** *13-5* **//**

पंच महाभूत, अहंकार, बुद्धि, मूल, प्रकृति, मन समेत, ग्यारह ज्ञानेंद्रियां और कर्मेंद्रियां तथा पांच इंद्रियों के विषय (अर्थात शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध) (कुल चौबीस)।

Five universal elements, the I-sense of definition, intelligence, original Prakrti, five jnanendriyas, five karmendriyas, one mind, five objects of sense (twenty four in all).

इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं सङ्घातश्चेतना धृतिः ।
एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम् ॥ १३-६॥
Icchā dveṣaḥ sukhaṃ duḥkhaṃ saṅghātaścetanā dhṛtiḥ **/**
Etatkṣetraṃ samāsena savikāramudāhṛtam **//** *13-6* **//**

इच्छा, द्वेष, सुख-दुःख, शरीर, चेतना, धृति, यह संक्षिप्त विकार समत क्षेत्र का ज्ञान है।

Love and Hate, pleasure and pain, the organismic unity of body, awareness of experience, and convictions, this is the Kshetra in brief and its mutations, all described.

अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम् ।
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः ॥ १३-७॥
Amānitvamadambhitvamahiṃsā kṣāntirārjavam **/**
Ācāryopāsanaṃ śaucaṃ sthairyamātmavinigrahaḥ **//** *13-7* **//**

अमानित्वम् (अभिमान ना होना), अदम्भित्वम् (किसी को धोखा न देना), अहिंसा, क्षान्ति (क्षमाशील होना), आर्जवम् (सरलता), आचार्योपासनम् (गुरूसेवा), शौचम् (शुद्धि), स्थैर्यम् (मन की स्थिरता), आत्मविनिग्रह (मन एवम और इन्द्रियों का वश में होना)।

Humility, naturalness, non-violence, patience, simplicity, service of the teacher, purity, steadiness, self control.

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहङ्कार एव च ।
जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥ १३-८॥
Indriyārtheṣu vairāgyam anahaṅkāra eva ca **/**
Janmamṛtyujarāvyādhiduḥkhadoṣānudarśanam **//** *13-8* **//**

इन्द्रिय विषयों के प्रति वैराग्य, अहंकार न होना, जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा, बीमारी, दुःख दोष, इन दःखों पर विचार।

Non-attachment to the objects and pleasures of sense, freedom from pride, appreciation of the weaknesses of birth, death, old age, ill-health and self-analysis.

असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु ।
नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥ १३-९॥
Asaktiranabhiṣvaṅgaḥ putradāragṛhādiṣu **/**
Nityaṃ ca samacittatvamiṣṭāniṣṭopapattiṣu **//** *13-9* **//**

पुत्र, स्त्रो, घर, धन आदि के प्रति अनासक्ति ममता न होना, इष्ट अनिष्ट प्राप्ति, अप्राप्ति इन विषयों पर सदा समान रहना।

Disinterestedness, non-infatuation with children, wife or family, constant equanimity, steadiness in success or failure.

मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी ।
विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि ॥ १३-१०॥
Mayi cānanyayogena bhaktiravyabhicāriṇī **/**
Viviktadeśasevitvamaratirjanasaṃsadi **//** *13-10* **//**

अनन्य योग द्वारा निरंतर मेरे प्रति भक्ति भाव रखना, एकांत ध्यान मग्न रहना, भीड़ भड़क्क से दूर रहना....

Dedication to Me exclusively without disturbance, love of quiet environment, and indifference to social applause.

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम् ।
एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा ॥ १३-११॥
Adhyātmajñānanityatvaṃ tattvajñānārthadarśanam **/**
Etajjñānamiti proktamajñānaṃ yadato'nyathā **//** *13-11* **//**

नित्य आध्यात्म विषयों पर चिंतन, तत्वज्ञान पर विचार, यह ज्ञान विषय का कथन है, इसके विपरीत अज्ञान का कथन कहलाया जाएगा।

Relentless pursuit of spiritual knowledge, insight into the content of the essence of knowledge, this is the definition of knowledge. Ignorance is contrary to all this.

ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामृतमश्नुते ।
अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते ॥ १३-१२॥
Jñeyaṃ yattatpravakṣyāmi yajjñātvāmṛtamaśnute **/**
Anādimatparaṃ brahma na sattannāsaducyate **//** *13-12* **//**

ज्ञय, जो जानने योग्य है, उसका कथन अब करूंगा। जो ज्ञय है उसको जान कर अमृत ज्ञान की प्राप्ति होती है। परम ब्रह्म अनादि है, वह सत् असत् से परे है, या यूं भी कह सकते हैं परम ब्रह्म सत् भी है असत् भी है। या जो सत् भी नहीं और असत् भी नहीं।

What ought to be known, I shall explain: all that which leads man to immortality, and that Eternal Ultimate Brahma which is beyond sat and asat as the wise say:

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥ १३-१३॥
Sarvataḥ pāṇipādaṃ tatsarvato'kṣiśiromukham **/**
Sarvataḥ śrutimalloke sarvamāvṛtya tiṣṭhati **//** *13-13* **//**

परम ब्रह्म के हाथ पैर सर्वव्यापी हैं। उसके नेत्र, सिर और मुख सर्वव्यापी हैं। उसकी श्रुति (श्रवण) सर्वव्यापी है, उसका आवरण सर्वव्यापी है।

All-way, universally, with infinite hands and feet, with universal eyes, heads and mouths, universal ears to hear in the world, It exists comprehending everything.

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् ।
असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च ॥ १३-१४॥
Sarvendriyaguṇābhāsaṃ sarvendriyavivarjitam **/**
Asaktaṃ sarvabhṛccaiva nirguṇaṃ guṇabhoktṛ ca **//** *13-14* **//**

उस परम ब्रह्म की इंद्रियां सर्वव्यापी हैं और इसकी कोई इंद्रियां भी नहीं हैं। भी वह असक्त भी है और सबका भरण पोषण भी करता है। वह निगुण भी है और गुणों का भोक्ता भी है।

It has the experience of all senses, yet It is without all the senses. It is non-attached, yet It sustains all. It is free of gunas and yet It has the experience of all the guna modifications.

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च ।
सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत् ॥ १३-१५॥
Bahirantaśca bhūtānāmacaraṃ carameva ca **/**
Sūkṣmatvāttadavijñeyaṃ dūrasthaṃ cāntike ca tat **//** *13-15* **//**

संसार की सब वस्तुओं और प्राणियों के भीतर बाहर भी ह, चर भी है और अचर भी है, अति सूक्ष्म होने के कारण अज्ञेय भी है और सबके भीतर भी है, दूर से दूर, बाहर भी है।

It is in and out of all forms of existence. It is still, and yet It is ever on the move. It is so subtle that It cannot be perceived or known. It is the closest and yet the farthest.

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम् ।
भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च ॥ १३-१६॥
Avibhaktaṃ ca bhūteṣu vibhaktamiva ca sthitam **/**
Bhūtabhartṛ ca tajjñeyaṃ grasiṣṇu prabhaviṣṇu ca **//** *13-16* **//**

वह सम्पूर्ण अविभक्त भी है। भूत प्राणियों में विभक्त स्थिर भी है, सब भूतों का धारक पोषक भी ह, ज्ञेय है, सृष्टि का संहारकर्ता भी है, जन्मदाता भी है।

It is One undivided over the forms of existence and yet It is still, as if divided over all. It ought to be known as the sustainer of all forms and yet It devours and regenerates.

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते ।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम् ॥ १३-१७॥
Jyotiṣāmapi tajjyotistamasaḥ paramucyate **/**
Jñānaṃ jñeyaṃ jñānagamyaṃ hṛdi sarvasya viṣṭhitam ***// 13-17 //***

वह ज्योतियों की ज्योति है, तमस् से परे है। वही ज्ञान है, वही ज्ञेय है, ज्ञान से ही गाया जाता है, सबके हृदय में स्थिर है।

It is the Light of lights beyond darkness. It is the Knowledge, worth Knowing, and the object of knowledge. It stays at the heart core of all and everything.

इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः ।
मद्भक्त एतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते ॥ १३-१८॥
Iti kṣetraṃ tathā jñānaṃ jñeyaṃ coktaṃ samāsataḥ **/**
Madbhakta etadvijñāya madbhāvāyopapadyate ***// 13-18 //***

यह क्षेत्र और ज्ञानज्ञय का बखान संक्षेप में समाप्त हुआ। मेरा भक्त इसको जान के मेरे भाव में परिणत हो जाता है।

This is Kshetra, and knowledge, and worth knowing, said in brief. My devotee, having known this, comes up to my presence.

प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि ।
विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसम्भवान् ॥ १३-१९॥
Prakṛtiṃ puruṣaṃ caiva viddhyanādī ubhāvapi **/**
Vikārāṃśca guṇāṃścaiva viddhi prakṛtisambhavān ***// 13-19 //***

प्रकृति और पुरुष दोनों को अनादि समझो। प्रकृति के विकार (इवोल्यूट्स) और गुणों को भी प्रकृति के रूप ही समझो, सबको, क्योंकि वे प्रकृति के कारण ही संभव होते हैं।

Know Prakrti and Purusha both, eternal are both. Know also the modifications and gunas evolved of Prakrti. They are forms of Prakriti, because as evolutes.

कार्यकारणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते ।
पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते ॥ १३-२०॥
Kāryakāraṇakartṛtve hetuḥ prakṛtirucyate **/**
Puruṣaḥ sukhaduḥkhānāṃ bhoktṛtve heturucyate ***// 13-20 //***

कार्य कारण और कर्तृत्व में वास्तव में प्रकृति ही कारण है। किंतु सुख-दुःख के भोग में पुरुष ही कारण है, क्योंकि सुख-दुःख पुरुष के कर्म के अनुसार होते हैं।

Prakrti is said to be the cause of all effective modifications in the process of creation, of all the causes of modifications, and of all states of modification. In simple words, Prkrti is its own agent, instrument and the dynamics of modifications. Purusha (with his presence) is said to be the cause and purpose of the experience of pleasure and pain.

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान्गुणान् ।
कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु ॥ १३-२१॥
Puruṣaḥ prakṛtistho hi bhuṅkte prakṛtijānguṇān **/**
Kāraṇaṃ guṇasaṅgo'sya sadasadyonijanmasu **//** *13-21* **//**

प्राकृतिक शरीर में स्थित पुरुष प्रकृति के गुणों के अनुसार जीता है और प्रकृति के गुणों का भोग करता है। कारण यह है कि सत् और असत् योनियों में जन्म लेने के कारण इसे प्रकृति के साथ रहना पड़ता है और उसके गुणों का भोग करना पड़ता है।

Purusha, placed in Prakrtic body, experiences the qualitative modifications of Prakrti. The cause of the experience is the Purusha's involvement with the qualitative modifications (gunas) of Prakrti which lead the Purusha to higher or lower forms of life.

उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः ।
परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन्पुरुषः परः ॥ १३-२२॥
Upadraṣṭānumantā ca bhartā bhoktā maheśvaraḥ **/**
Paramātmeti cāpyukto dehe'sminpuruṣaḥ paraḥ **//** *13-22* **//**

वही परमपुरुष, महेश्वर, इस शरीर में जन्म लेने के कारण परमात्मा, महेश्वर, उपद्रष्टा, अनुमन्ता, भोक्ता इत्यादि कहा जाता है।

Closest seer, thinker, sustainer, experiencer (with the individual seer) is the Supreme Ishwara. It has also been said to be Paramatma, the Param Purusha in this body.

य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह ।
सर्वथा वर्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते ॥ १३-२३॥
Ya evaṃ vetti puruṣaṃ prakṛtiṃ ca guṇaiḥ saha **/**
Sarvathā vartamāno'pi na sa bhūyo'bhijāyate **//** *13-23* **//**

जो व्यक्ति प्रकृति और पुरुष को गुणों समेत ऐसे जानता है, वह सब प्रकार से वर्तमान में पुनर्जन्म नहीं लेता।

Whoever knows Purusha and Prakrti along with the dynamic modifications of Prakrti, he or she presently existing anyway does not take another birth.

ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना ।
अन्ये साङ्ख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे ॥ १३-२४॥
Dhyānenātmani paśyanti kecidātmānamātmanā **/**
Anye sāṅkhyena yogena karmayogena cāpare **//** *13-24* **//**

ध्यान से कुछ लोग आत्मा के माध्यम से आत्मदर्शन करते हैं, कोई सांख्य योग के द्वारा, दूसरे कर्मयोग के द्वारा।

With meditation on the atma with Parmatma, some yogis see the Paramatma in the individual atma. Others see the same through Sankhya yoga, while others realize the same with karma Yoga.

अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते ।
तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः ॥ १३-२५॥
Anye tvevamajānantaḥ śrutvānyebhya upāsate **/**
Te'pi cātitarantyeva mṛtyuṃ śrutiparāyaṇāḥ **//** *13-25* **//**

कुछ लोग अज्ञान के कारण दूसरों से सुनकर उपासना करते हैं। वे भी श्रुति परायण होकर मृत्यु के पार हो जाते हैं।

Others who do not know this way, having heard from others, do worship the Paramatma as they say. They also cross over death, dedicated as they are to Shruti (the Vedas).

यावत्सञ्जायते किञ्चित्सत्त्वं स्थावरजङ्गमम् ।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ ॥ १३-२६॥
Yāvatsañjāyate kiñcitsattvaṃ sthāvarajaṅgamam **/**
Kṣetrakṣetrajñasaṃyogāttadviddhi bharatarṣabha **//** *13-26* **//**

हे भरतवंशी अर्जुन, जितने भी स्थावर या जंगम व्यक्ति इस संसार में जन्म लेते हैं ऐसा जान ले कि वे सब क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के संयोग से ही होते हैं।

Whatever the form of existence that comes into being, whether it is moving or non-moving, O best of the Bharats, it comes into being by the integration of the Kshetra and the Kshetrajna.

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम् ।
विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति ॥ १३-२७॥
Samaṃ sarveṣu bhūteṣu tiṣṭhantaṃ parameśvaram **/**
Vinaśyatsvavinaśyantaṃ yaḥ paśyati sa paśyati **//** *13-27* **//**

प्राणी मात्र संसार में जो परमेश्वर को समान रूप से व्याप्त देखता है वह परमेश्वर इस विनाश शोल संसार में अविनाशी रूप स स्थित ह, वास्तव में वही सही दृष्टि से देखता है।

One who sees Parameshwara existing in all forms of life equally and equanimously, who sees the Imperishable at the heart core of the perishables, he is the real visionary. He sees the real and the permanent.

समं पश्यन्हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम् ।
न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम् ॥ १३-२८॥
Samaṃ paśyanhi sarvatra samavasthitamīśvaram **/**
Na hinastyātmanātmānaṃ tato yāti parāṃ gatim **//** *13-28* **//**

जा साधक ईश्वर को समान रुप से सर्वव्यापक रूप में देखता है, वह कभी भी आत्मा का हनन् नहीं करता। वह परम गति को प्राप्त हो जाता है।

Seeing Ishwara everywhere equally well at the heart core of things, he does not forsake the Atma exiting with the atma but reaches the highest spiritual state.

प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः ।
यः पश्यति तथात्मानमकर्तारं स पश्यति ॥ १३-२९॥
Prakṛtyaiva ca karmāṇi kriyamāṇāni sarvaśaḥ **/**
Yaḥ paśyati tathātmānamakartāraṃ sa paśyati **//** *13-29* **//**

जो साधक यह अनुभव कर लेता है कि केवल प्रकृति ही सब कर्म करती है तथा वह यह भी देख लेता है कि आत्मा तो वास्तव में अकता है।

By Prakrti only, all Karmas are done always. Therefore one who sees that the atma is not the doer, really knows and sees the reality of things.

यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति ।
तत एव च विस्तारं ब्रह्म सम्पद्यते तदा ॥ १३-३०॥
Yadā bhūtapṛthagbhāvamekasthamanupaśyati **/**
Tata eva ca vistāraṃ brahma sampadyate tadā **//** *13-30* **//**

जब व्यक्ति सृष्टि के पृथक भावों में एकस्थ परमेश्वर के सहारे खड़े संसार को देख लेता है और यह भी देख लेता है कि यह सृष्टि विस्तार एक मात्र एक का ही विस्तार है तब वह ब्रह्म को ही प्राप्त हो जाता है।

When a person sees the different specific forms of existence subsisting in one comprehensive reality, and sees the one as different developing versions of the same, one, then he realizes the nature of Brahma. In simple words, when you see many as one and the one as many, then you realize Brahma.

अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः ।
शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते ॥ १३-३१॥
Anāditvānnirguṇatvātparamātmāyamavyayaḥ **/**
Śarīrastho'pi kaunteya na karoti na lipyate ***//*** *13-31* ***//***

हे कौंतेय, अनादि और गुणातीन होने के कारण ब्रह्म अविनाशी है। किन्तु संसार रूपी शरीर को धारण करके भी वह न तो कर्म करता है ना लिप्त होता है।

O Kaunteya, Atma is eternal, beginningless. It is beyond the modifications of Prakrti and it is imperishable. Even though living in the body, it neither does, nor does it get involved, essentially.

यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते ।
सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते ॥ १३-३२॥
Yathā sarvagataṃ saukṣmyādākāśaṃ nopalipyate **/**
Sarvatrāvasthito dehe tathātmā nopalipyate ***//*** *13-32* ***//***

जैसे आकाश सर्वव्यापी ह, सूक्ष्म हाने के कारण लिप्त नहीं होता, इसी प्रकार सर्वव्यापी आत्मा संसार रूपी शरीर होते हुए भी लिप्त नहीं होता।

Just as because of subtlety, the omnipresent akasha (space) does not get involved or polluted, similarly though present in the body everywhere, atma does not get involved.

यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः ।
क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत ॥ १३-३३॥
Yathā prakāśayatyekaḥ kṛtsnaṃ lokamimaṃ raviḥ **/**
Kṣetraṃ kṣetrī tathā kṛtsnaṃ prakāśayati bhārata ***//*** *13-33* ***//***

हे भरतवंशी अर्जुन, जैसे एक सूर्य सारे संसार को प्रकाशित कर देता है, वैसे ही एक क्षेत्रज्ञ आत्मा सारे क्षेत्र रूपी विश्व को प्रकाशित कर देता है।

Just as the one Sun lights up the whole earth (world), so does the master of the kshetra inform and light up the whole kshetra (body).

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमन्तरं ज्ञानचक्षुषा ।
भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम् ॥ १३-३४॥
Kṣetrakṣetrajñayorevamantaraṃ jñānacakṣuṣā **/**
Bhūtaprakṛtimokṣaṃ ca ye viduryānti te param ***//*** *13-34* ***//***

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के आन्तरिक रहस्य को और प्रकृति के कार्य से मोक्ष को जो साधक ज्ञान चक्षु के द्वारा ज्ञान लेते हैं वे परम आत्मा को प्राप्त करते हैं।

Those who know the difference and distinction between the kshetra and the kshetrajna (Prakrti and Purusha) with their eye of knowledge, and who also know the nature and character of the forms of Prakrtic existence, and Moksha (freedom from the world of mortality), they attain to the Ultimate.

CHAPTER-14

(गुणत्रय विभाग योग)

परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम् ।
यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः ॥ १४-१॥
Paraṃ bhūyaḥ pravakṣyāmi jñānānāṃ jñānamuttamam **/**
Yajjñātvā munayaḥ sarve parāṃ siddhimito gatāḥ **//** *14-1* **//**

श्री भगवान बोले:

मैं ज्ञानों में ज्ञान जो उत्तम ज्ञान है, उस ज्ञान की चर्चा तुमसे करूंगा। जिस को जान कर सारे मुनि परम सिद्धि प्राप्त करके इस संसार से चले गए।

I shall now, again, speak of the highest branch of knowledge, the best. Having known that, all the sages attained the highest stage of perfection from here.

इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः ।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च ॥ १४-२॥
Idaṃ jñānamupāśritya mama sādharmyamāgatāḥ **/**
Sarge'pi nopajāyante pralaye na vyathanti ca **//** *14-2* **//**

उस ज्ञान को प्राप्त हुए योगी मेरे धर्म एवं स्वरूप को प्राप्त हो जाते हैं, वे फिर इस संसार में जन्म नहीं लेते और प्रलय काल में भी उनको कोई दु:ख नहीं होता।

Having recourse to this branch of knowledge, through life, sages came to the nature and character similar to mine. Even at the beginning of the next creation, they do not have rebirth, nor, at the time of the dissolution (death), do they feel any pain.

मम योनिर्महद् ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम् ।
सम्भवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत ॥ १४-३॥
Mama yonirmahad brahma tasmingarbhaṃ dadhāmyaham **/**
Sambhavaḥ sarvabhūtānāṃ tato bhavati bhārata **//** *14-3* **//**

हे भरत, यह महत्प्रकृति सब पाणियों के जन्म के लिए योनि के समान है और परमब्रह्म कृष्ण रूप में सब प्राणियों के बीज उस प्रकृति में स्थापित करते हैं। तभी सब प्राणियों का जन्म होता है।

O Bharata, Mahad Brahma, great Prakrti, is my womb, and therein I place the seed of life, and therefrom starts the universal evolution of all the forms of existence.

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः ।
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ॥ १४-४॥
Sarvayoniṣu kaunteya mūrtayaḥ sambhavanti yāḥ **/**
Tāsāṃ brahma mahadyonirahaṃ bījapradaḥ pitā **//** *14-4* **//**

इस प्रकार प्रकृति सब जीवो की माता है और परम ब्रह्म कृष्ण रूप में उन सब जीवां के पिता हैं।
Kaunteya, in all species of existence whatever forms evolve, of all those forms, Prakrti is the mother and I am the life-giving father.

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः ।
निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम् ॥ १४-५॥
Sattvaṃ rajastama iti guṇāḥ prakṛtisambhavāḥ **/**
Nibadhnanti mahābāho dehe dehinamavyayam **//** *14-5* **//**

सत्व, रजस् और तमस् तीनों गुणों का जन्म प्रकृति से ही होता है। ये तीनों गुण सभी देहधारी जीवों को कर्म बंध रूपी बंधन में डालते हैं।
Sattva (thought, buddhi), Rajas (motion, energy) and Tamas (inertia, matter), these are the gunas (modifications) which evolve from Prakrti, O man strong of the arm, and they bind the imperishable jivatma in the body.

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम् ।
सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन चानघ ॥ १४-६॥
Tatra sattvaṃ nirmalatvātprakāśakamanāmayam **/**
Sukhasaṅgena badhnāti jñānasaṅgena cānagha **//** *14-6* **//**

इन तीनों गुणों में सत्व निर्मल है, प्रकाशक है, निर्विकार है। वह जीव को सुख प्रेमी और ज्ञान संगी बनाता है और इस प्रकार, हे निष्पाप अर्जुन, सुख और ज्ञान, जीव को बंधन में डाल देते हैं।
There is Sattva, which, because of its purity, lightness and transparency, binds man with love of ease, comfort and knowledge, O pure of heart.

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम् ।
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम् ॥ १४-७॥
Rajo rāgātmakaṃ viddhi tṛṣṇāsaṅgasamudbhavam **/**
Tannibadhnāti kaunteya karmasaṅgena dehinam **//** *14-7* **//**

रजोगुण रागात्मक है, तृष्णासंग से उसका जन्म होता है, राग और तृष्णा से कर्म की इच्छा होती है, हे कौन्तय, जीव को रजोगुण कर्म की इच्छा से बन्धन में डालता है।

Rajas is of the nature of attachment, take it as born of the love of thirst and ambition. Kaunteya, that binds the spirit of man with the love of action and ambition.

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम् ।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत ॥ १४-८॥
Tamastvajñānajaṃ viddhi mohanaṃ sarvadehinām **।**
Pramādālasyanidrābhistannibadhnāti bhārata **॥** *14-8* **॥**

हे भरतवंशी अर्जुन, तमोगुण का जन्म अज्ञान से होता है। तमो गुणी जीव मोह से दुःखी होते हैं, प्रमाद, आलस्य, निद्रा, इसके दूसरे रूप हं। हे भारत, प्रमाद, आलस्य, निद्रा, तमोगुणी जीव को बन्धन में डाल देते हैं।

O Bharata, Tamas is born of ignorance, know that it is sloth and delusion of all body-bearers. It binds the spirit with the love of cynic fun, sloth and sleep.

सत्त्वं सुखे सञ्जयति रजः कर्मणि भारत ।
ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे सञ्जयत्युत ॥ १४-९॥
Sattvaṃ sukhe sañjayati rajaḥ karmaṇi bhārata **।**
Jñānamāvṛtya tu tamaḥ pramāde sañjayatyuta **॥** *14-9* **॥**

हे भरतवंशी, सतोगुण जीव को सुखप्रेम से बांधता है। रजो गुण कर्म की इच्छा से बांधता है, और तमोगुण ज्ञान पर पर्दा डालकर आलस्य और प्रमाद से जीव को बांधता है।

O Bharata, Sattva leads you to comfort, Rajas, to karma and effort, and Tamas, having neglected knowledge, covered with darkness, leads man to neglect of serious pursuits.

रजस्तमश्चाभिभूय सत्त्वं भवति भारत ।
रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा ॥ १४-१०॥
Rajastamaścābhibhūya sattvaṃ bhavati bhārata **।**
Rajaḥ sattvaṃ tamaścaiva tamaḥ sattvaṃ rajastathā **॥** *14-10* **॥**

सत्व तो रजस् और तमस् को दबाता है, रजो गुण सत्व और तमस् को दबाता है। तमोगुण सत्व और रजस को दबा लेता है। तीनों गुण इसी रूप में एक दूसरे को दबाते हैं और बढ़ते हैं।

Having suppressed Rajas and Tamas, Sattva arises; Rajas arises on the suppression of Sattva and Tamas; Tamas arises on the suppression of Sattva and Rajas.

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्प्रकाश उपजायते ।
ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्त्वमित्युत ॥ १४-११॥

Sarvadvāreṣu dehe'sminprakāśa upajāyate **/**
Jñānaṃ yadā tadā vidyādvivṛddhaṃ sattvamityuta **//** *14-11* **//**

जब इस मानव देह की इंद्रियां और अंत:करण में प्रकाश और ज्ञान बढ़ जाता है तब समझो कि सत्व की वृद्धि हुई है।

When the sensitivity and light of the mind and senses of the whole body system are stimulated, then take it that Sattva is on the rise.

लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा ।
रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ ॥ १४-१२॥
Lobhaḥ pravṛttirārambhaḥ karmaṇāmaśamaḥ spṛhā **/**
Rajasyetāni jāyante vivṛddhe bharatarṣabha **//** *14-12* **//**

हे भरत, जब लोभ, प्रवृत्ति, कर्मेच्छा, अशान्ति, और चाहत बढ़ती है तो समझो कि रजोंगुण की वृद्धि हो गई है।

O blessed of the Bharatas, when greed arises, when attachment begins to disturb, when the desire for action and expansion becomes uncontrollable, then know that Rajas is on the increase because all these are born of Rajas.

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च ।
तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन ॥ १४-१३॥
Aprakāśo'pravṛttiśca pramādo moha eva ca **/**
Tamasyetāni jāyante vivṛddhe kurunandana **//** *14-13* **//**

जब अप्रकाश अप्रवत्ति, प्रमाद, मोह बढ़ता है। तो, हे कुंरूनन्दन, यह समझो कि तमस बढ़ गया है।

When darkness is around, activity is on the decline, negligence and delusion mislead man, O Kurunandana, then know, it is the onslaught of Tamas.

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत् ।
तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते ॥ १४-१४॥
Yadā sattve pravṛddhe tu pralayaṃ yāti dehabhṛt **/**
Tadottamavidāṃ lokānamalānpratipadyate **//** *14-14* **//**

जब सत्व के बढ़ने पर देहधारी शरीर छोड़ता है। तो उत्तम विद्वान और स्वच्छ लोक में पुनर्जन्म पाता है।

When Sattva is on the increase, then, if man leaves the body and dies, then the person is reborn in the world (family) of knowledge and culture and purity of thought and action.

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते ।
तथा प्रलीनस्तमसि मूढयोनिषु जायते ॥ १४-१५॥
Rajasi pralayaṃ gatvā karmasaṅgiṣu jāyate **/**
Tathā pralīnastamasi mūḍhayoniṣu jāyate **//** *14-15* **//**

रजस् प्रवृद्धि में शरीर छोड़ने पर कर्मेच्छा में प्रधान लोक में पुनर्जन्म पाता है, तमस् प्रधान समय में शरीर छोड़ने पर मूढ़योनि में पुनर्जन्म होता है।

When man dies in the state of Rajas on the increase, he is reborn in a family of the lovers of action and expansion. And dying in the state of Tamas, man is reborn in the form of the ignorant and the deluded.

कर्मणः सुकृतस्याहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम् ।
रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम् ॥ १४-१६॥
Karmaṇaḥ sukṛtasyāhuḥ sāttvikaṃ nirmalaṃ phalam **/**
Rajasastu phalaṃ duḥkhamajñānaṃ tamasaḥ phalam **//** *14-16* **//**

श्रेष्ठ सुकृत् का फल सात्विक और निर्मल होता है। रजस् का फल दुःखमय होता है। तमस् का फल अज्ञानमय होता है।

The wise say that the result of good action well performed is enlightenment and purity. The result of Rajasic karma is suffering. And the result of Tamasic karma is ignorance.

सत्त्वात्सञ्जायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च ।
प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च ॥ १४-१७॥
Sattvātsañjāyate jñānaṃ rajaso lobha eva ca **/**
Pramādamohau tamaso bhavato'jñānameva ca **//** *14-17* **//**

सत्व का फल ज्ञान है, रजस् का फल है लोभ, तमस् का फल है प्रमाद, मोह, अज्ञान।

From Sattva is born knowledge and enlightenment, from Rajas, only greed, and from Tamas is born deliberate neglect, delusion and ignorance.

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः ।
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः ॥ १४-१८॥
Ūrdhvaṃ gacchanti sattvasthā madhye tiṣṭhanti rājasāḥ **/**
Jaghanyaguṇavṛttisthā adho gacchanti tāmasāḥ **//** *14-18* **//**

सत्व स्थित व्यक्ति उच्च योनियों में जाते हैं। राजसी बीच में रहते हैं। तामसी नीच योनियों में जाते हैं।

Men of Sattvic nature go high, Rajasics get stuck up in the middle, and Tamasics get to despicable character and attitudes, lowest of the low.

नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टानुपश्यति ।
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति ॥ १४-१९॥
Nānyaṃ guṇebhyaḥ kartāraṃ yadā draṣṭānupaśyati **/**
Guṇebhyaśca paraṃ vetti madbhāvaṃ so'dhigacchati **//** *14-19* **//**

जब कर्मकर्ता कर्म-द्रष्टा होकर किसी और कर्ता को गुणों के अतिरिक्त कर्ता नहीं मानता और तीन गुणों के पार परमब्रह्म को जानता है, तब वह ब्रह्मभाव को प्राप्त हो जाता है।
When the seer, man of vision and awareness, sees that there is no agent, karta or doer other and higher than the Gunas of Prakrti, and he also sees beyond the gunas too, and realises the ultimate Brahma, then this seer comes to my state of Being.

गुणानेतानतीत्य त्रीन्देही देहसमुद्भवान् ।
जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते ॥ १४-२०॥
Guṇānetānatītya trīndehī dehasamudbhavān **/**
Janmamṛtyujarāduḥkhairvimukto'mṛtamaśnute **//** *14-20* **//**

जब मनुष्य जन्म के कारण उत्पन्न इन तीन गुणों का कर्मकर्ता रूप में पार कर लेता है, तब मनुष्य जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा आदि दुःखों के पार होकर ब्रह्मानन्द को प्राप्त हो जाता है।
Having crossed over the three gunas born of the body conditions of life, man rises to a vision, beyond birth, death, old age and suffering and attains to freedom and immortality against the mortal rounds.

अर्जुन उवाच ।
कैर्लिङ्गैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवति प्रभो ।
किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्तते ॥ १४-२१॥
Arjuna uvāca **/**
Kairliṅgaistrīnguṇānetānatīto bhavati prabho **/**
Kimācāraḥ kathaṃ caitāṃstrīnguṇānativartate **//** *14-21* **//**

अर्जुन ने पूछाः
हे प्रभो, गुणातीत व्यक्ति की पहचान क्या है, उसका आचरण कैसा है, कैसे कोई व्यक्ति गुणातीत बनता है। कैसे तीन गुणों को पार करता है।
Says Arjuna:

O Lord, what are the characteristic marks and symptoms by which it is known that a man has crossed over these three gunas? What is his way of living? And how does a man cross over those three gunas?

श्रीभगवानुवाच ।
प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव ।
न द्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षति ॥ १४-२२॥
Śrībhagavānuvāca **/**
Prakāśaṃ ca pravṛttiṃ ca mohameva ca pāṇḍava **/**
Na dveṣṭi sampravṛttāni na nivṛttāni kāṅkṣati **//** *14-22* **//**

श्री भगवान ने उत्तर दिया:

हे पांडव, प्रकाश प्रवृत्ति और मोह से तीनों गुणों की पहचान है। ये जब किसी व्यक्ति में उदय होते हैं तो उसमें इनके प्रति कोई द्वेष न हो, समाप्त हो जांए तो कोई इच्छा न हो, ऐसा व्यक्ति गुणातीत होता है।

Says the Lord:
Man above the gunas: When a man hates no light, attachment or illusion or delusion when they are there, nor does he long for them when they are not there, in other words when he is totally unaffected by these (then the man has risen above the gunas).

उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते ।
गुणा वर्तन्त इत्येवं योऽवतिष्ठति नेङ्गते ॥ १४-२३॥
Udāsīnavadāsīno guṇairyo na vicālyate **/**
Guṇā vartanta ityevaṃ yo'vatiṣṭhati neṅgate **//** *14-23* **//**

गुणों से जो विचलित नहीं होता, जो गुणों के प्रति उदासीन है, जो यह मानता है कि प्रकृति के गुण अपना काम करते हैं, ऐसा मानकर जो निश्चिंत है, विचलित नहीं है, वह गुणातीत है।

He stays still, unaffected, undisturbed by the gunas, when he has realised that it is the modifications of nature at work, nothing more, saying ‘it is not I anyway’. He stays without concern or worry and he does not agitate....

समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः ।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ॥ १४-२४॥
Samaduḥkhasukhaḥ svasthaḥ samaloṣṭāśmakāñcanaḥ **/**
Tulyapriyāpriyo dhīrastulyanindātmasaṃstutiḥ **//** *14-24* **//**

जो दु:ख-सुख में समान है, आत्मा में स्वस्थ है, मिट्टी हो, पत्थर हो, स्वर्ण हो, यह विचलित नहीं, इच्छा अनुसार ही, इच्छा के विरुद्ध हो, निंदा हो, स्तुति हो, यह सब अवस्थाओं में अविचलित है, ऐसा व्यक्ति गुणातीत है।

He is equal with pleasure or pain, happy with the self, equally unaffected by a block of gold or lump of clay. He is the same in relation to the lovely and the distasteful. He is deep and well founded, the same with self-praise or self-dispraise.

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः ।
सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते ॥ १४-२५॥
Mānāpamānayostulyastulyo mitrāripakṣayoḥ **/**
Sarvārambhaparityāgī guṇātītaḥ sa ucyate **//** *14-25* **//**

कोई मान करे, अपमान करे, मित्र हो, अमित्र हो, किसी काम के प्रारंभ में कर्ता रूप में अभिमान नहीं, ऐसा व्यक्ति गुणातीत है।

Equal in honor or dishonor, equal with friend or foe, free from self-pride when he takes the initative, then he is beyond all activity of the modifications of nature.

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते ।
स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ १४-२६॥
Māṃ ca yo'vyabhicāreṇa bhaktiyogena sevate **/**
Sa guṇānsamatītyaitānbrahmabhūyāya kalpate **//** *14-26* **//**

जो निरंतर भक्ति पूर्वक मेरी (ब्रह्म) सेवा करता है, सो गुणातीत होकर ब्रह्म का ही हो जाता है।

One who is dedicated to me without straying any way, with unflinching dedication, he crosses over these gunas and deserves the Brahmi state on high.

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च ।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च ॥ १४-२७॥
Brahmaṇo hi pratiṣṭhāhamamṛtasyāvyayasya ca **/**
Śāśvatasya ca dharmasya sukhasyaikāntikasya ca **//** *14-27* **//**

मैं ब्रह्म में स्थित हूँ, जो अमृत है, अविनाशी है। शाश्वत धर्म में, अनेकान्त सुख में स्थित हूँ, सनातन हूँ।

I am the center and the seat (firm foundation) of the Brahmi state, immortal and imperishable, of eternal Dharma, and of everlasting bliss.

CHAPTER-15
(पुरुषोत्तम योग)

श्रीभगवानुवाच ।
ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥ १५-१॥
Śrībhagavānuvāca **/**
Ūrdhvamūlamadhaḥśākhamaśvatthaṃ prāhuravyayam **/**
Chandāṃsi yasya parṇāni yastaṃ veda sa vedavit **//** *15-1* **//**

श्री भगवान बोले:

जड ऊपर और शाखायें नीचे विद्वान इस सृष्टि को अविनाशी अश्वत्थ कहते हैं। वेद मंत्र इसके पत्ते हैं। जो इसको जानता है वही वेद वित्त अर्थात वेद का विद्वान है।

Shri Bhagawan says:
Roots upward and branches downward, the wise call the world a holy Ashwattha tree. The Veda mantras are its leaves. He that knows that, knows the Vedas.

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः ।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ॥ १५-२॥
Adhaścordhvaṃ prasṛtāstasya śākhā guṇapravṛddhā viṣayapravālāḥ **/**
Adhaśca mūlānyanusantatāni karmānubandhīni manuṣyaloke **//** *15-2* **//**

ऊपर नीचे इसकी शाखायें फैली हैं, प्रकृति के तीन गुणों से बढ़ती हैं। इंद्रियों के विषयों से उनकी कोंपलें फूटती हैं। नीचे ही नीचे इसकी जड़ें फैलती हैं, मनुष्य के कर्मों से वे मनुष्य को बांध लेती हैं, मनुष्य लोक की यही कहानी है।

Up and down extend the branches of the tree, they grow with the modifications of nature, with filaments fed by passion for objects of sense. Downwards extend the roots fed by the actions of humans in the world of humanity.

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा ।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूलं असङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा ॥ १५-३॥
Na rūpamasyeha tathopalabhyate nānto na cādirna ca sampratiṣṭhā **/**
Aśvatthamenaṃ suvirūḍhamūlaṃ asaṅgaśastreṇa dṛḍhena chittvā **//** *15-3* **//**

इस लोक में जैसे इसका रूप है कोई नहीं जानता। न उसका आदि है न अंत है। न इसकी प्रतिष्ठा को कोई जानता है, इसलिए अश्वत्थ की जड़ों को गहरी होने के कारण उखाड़ना कठिन है, लेकिन असंग शस्त्र से उनको काटना संभव है।

The form of the tree is not available as it is, here, neither the beginning nor the end, nor even the fixed foundation, deep though it is, even the deepest. But the deepest foundation too of the Ashwattha can be uprooted by detachment of the strongest order.

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः ।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी ॥ १५-४॥
Tataḥ padaṃ tatparimārgitavyaṃ yasmingatā na nivartanti bhūyaḥ **/**
Tameva cādyaṃ puruṣaṃ prapadye yataḥ pravṛttiḥ prasṛtā purāṇī **//** *15-4* **//**

इसका परम पद तो केवल परम ब्रह्म है, उसको खोज करना आवश्यक है, यदि वह मिल गया तो वहीं रह जाओगे, फिर वापस नहीं आना। मैं उसी परम पुरुष की शरण में हूँ, जहां से इस सृष्टि की कथा प्रारंभ हुई थी।

Then with detachment of that particular order, that destination should be sought whence or where from those who once reached there never return. Hence I pray: Let me reach that primal eternal Param Purusha whereby started the eternal evolution of the universal cosmic process of creative Karma.

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः ।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥ १५-५॥
Nirmānamohā jitasaṅgadoṣā adhyātmanityā vinivṛttakāmāḥ **/**
Dvandvairvimuktāḥ sukhaduḥkhasaṃjñairgacchantyamūḍhāḥ padamavyayaṃ tat **//** *15-5* **//**

जिनका मान और मोह समाप्त हो गया, जिन्होंने संघ दो को जीत लिया, जो आध्यात्मिक विषय में सदा रत हैं, जिनकी कामवासना चली गई, जो दुरंगी चाल से मुक्त हैं, सुख दु:ख में समान हैं, वही उस परम पद को प्राप्त करते हैं।

Those who are free from the sense of love and personal honor, those who have crossed over their limitations of attachment, who are ever dedicated to the self, whose desires are already fulfilled and gone, those who are free from the dualities of pleasure and pain, those intelligent and wise people attain to that high and imperishable state of being.

न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः ।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥ १५-६॥
Na tadbhāsayate sūryo na śaśāṅko na pāvakaḥ **/**

Yadgatvā na nivartante taddhāma paramaṃ mama **//** *15-6* **//**

वहां सूर्यप्रकाश नहीं पहुंचता, न चांद चमकता, न आग जलती। वहां जा के कोई वापस नहीं आता, वही मेरा धाम है।

The sun does not shine there in that self-luminous state, nor the moon, nor the fire. Once having been there, no one comes back and that is my place, Ultimate and Eternal.

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ।
मनःषष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥ १५-७॥
Mamaivāṃśo jīvaloke jīvabhūtaḥ sanātanaḥ **/**
Manaḥṣaṣṭhānīndriyāṇi prakṛtisthāni karṣati **//** *15-7* **//**

सनातन जीवात्मा मेरा ही अंश है, सनातन है, मन सहित पांच इंद्रियों को जो प्रकृति से जन्मी हैं जीवात्मा उनका आकर्षण करता है।

My very consciousness in part defined in the human world as jiva, eternal, attracts six senses inclusive of mind. The senses are versions of Prakrti.

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः ।
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् ॥ १५-८॥
Śarīraṃ yadavāpnoti yaccāpyutkrāmatīśvaraḥ **/**
Gṛhītvaitāni saṃyāti vāyurgandhānivāśayāt **//** *15-8* **//**

जैसे वायु गंध को अपने स्थान से दूर ले जाता है, वैसे ही जीवात्मा जिस शरीर को छोड़ता है, उससे जिस शरीर को प्राप्त करता है, वहां ही इन्द्रियों को ले जाता है।

Whichever body the jiva comes to get, or whichever it gives up, as master of the senses and mind, it does attract these senses and mind the same way as the wind takes and carries the smell from its source.

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च ।
अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते ॥ १५-९॥
Śrotraṃ cakṣuḥ sparśanaṃ ca rasanaṃ ghrāṇameva ca **/**
Adhiṣṭhāya manaścāyaṃ viṣayānupasevate **//** *15-9* **//**

सुनना, देखना, छूना, चखना, सूंघना, मन सहित इन्द्रियों को नए शरीर में मनुष्य लेकर विषयों का अनुभव करता है।

The jiva, as master of the ear, eye, the sense of touch, taste and smell including the mind, experiences the objects of the senses.

उत्क्रामन्तं स्थितं वापि भुञ्जानं वा गुणान्वितम् ।
विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः ॥ १५-१०॥

Utkrāmantaṃ sthitaṃ vāpi bhuñjānaṃ vā guṇānvitam **/**
Vimūḍhā nānupaśyanti paśyanti jñānacakṣuṣaḥ **// 15-10 //**

शरीर छोड़कर जाने वाले, शरीर में स्थित, या प्राकृतिक गुणों से युक्त शरीर से भोग करने वाले जन, आत्मा को नहीं जानते, ज्ञान चक्षु वाले आत्मा जानते हैं।

Whether leaving the body or staying in or experiencing whatever is the mode of Prakrti, the foolish do not see the Lord within, but the wise do see with the eye of knowledge.

यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् ।
यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः ॥ १५-११॥

Yatanto yoginaścainaṃ paśyantyātmanyavasthitam **/**
Yatanto'pyakṛtātmāno nainaṃ paśyantyacetasaḥ **// 15-11 //**

यत्न करने वाले योगी अंतःकरण में स्थित आत्मा को जानते हैं, किंतु अचेतस्, अशुद्ध आत्मा, व्यक्ति यत्न करते हुए भी आत्मा को नहीं जानते।

The yogis try to see the Supersoul within themselves and they do see It in the atma. But those who have not developed the self, even while they are trying, they fail to see It, because their consciousness is not developed.

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् ।
यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् ॥ १५-१२॥

Yadādityagataṃ tejo jagadbhāsayate'khilam **/**
Yaccandramasi yaccāgnau tattejo viddhi māmakam **// 15-12 //**

जो सूर्य का प्रकाश जगत को प्रकाशित करता है, जो चंद्रमा में या अग्नि में तेज है, वह तेज मेरा ही तेज है।

The splendour that is in the Sun and illuminates the whole world, which is in the moon, and which is in the fire, know that that splendour is mine.

गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा ।
पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः ॥ १५-१३॥

Gāmāviśya ca bhūtāni dhārayāmyahamojasā **/**
Puṣṇāmi cauṣadhīḥ sarvāḥ somo bhūtvā rasātmakaḥ **// 15-13 //**

पृथिवी में प्रवेश करके मैं अपनी शक्ति से सब प्राणियों को धारण करता हूँ। मैं रसात्मक सोम होकर सब ओषधियों को जीवन प्रदान करता हूँ।

Having entered in the earth I sustain the earthly forms with my vital energy, and being the Soma, vital energy of the moon, I nourish all the herbs.

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः ।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम् ॥ १५-१४॥

Ahaṃ vaiśvānaro bhūtvā prāṇināṃ dehamāśritaḥ **।**
Prāṇāpānasamāyuktaḥ pacāmyannaṃ caturvidham **॥** *15-14* **॥**

मैं वैश्वानर रूप में प्राणियों के शरीर में रहता हूँ, और प्राण, अपान, बन कर चार प्रकार के अन्न को पचाता हूँ (चार प्रकार के अन्न खाने-पीने, चूसने, चाटने वाला अन्न)।

I pervade the bodies of the living beings as Vaishvanara agni (vital heat), and present as vital energy with prana and apana, I digest food, four ways.

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनञ्च ।
वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ॥ १५-१५॥

Sarvasya cāhaṃ hṛdi sanniviṣṭo mattaḥ smṛtirjñānamapohanañca **।**
Vedaiśca sarvairahameva vedyo vedāntakṛdvedavideva cāham **॥** *15-15* **॥**

मैं जन जन के हृदय में स्थित हूँ, मुझसे ही ज्ञान, स्मृति और निष्कृति और विवाद होत हं। मैं वेदों का कर्ता, वेदांत का कता भी हूँ।

I am at the heart core of all people, and from me originate memory, knowledge, reason and logic. By the Vedas I am to be known, I am the ultimate theme of Vedanta and I am the ultimate awareness of the Vedas.

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च ।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ॥ १५-१६॥

Dvāvimau puruṣau loke kṣaraścākṣara eva ca **।**
Kṣaraḥ sarvāṇi bhūtāni kūṭastho'kṣara ucyate **॥** *15-16* **॥**

पुरुष दो हैं, क्षर और अक्षर। अक्षर एक कूटस्थ जीव, क्षर सब प्राकृतिक प्राणी हैं।

There are two purushas in the world: mutable and immutable. Mutable are all the body forms of the mortals, and at the heartcore of all this is the immutable, imperishable, eternal, it is said. It is atma.

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥ १५-१७॥

Uttamaḥ puruṣastvanyaḥ paramātmetyudāhṛtaḥ **/**
Yo lokatrayamāviśya bibhartyavyaya īśvaraḥ **//** *15-17* **//**

एक उत्तम पुरुष परमात्मा है, वही ईश्वर है, जो सबका भरण पोषण करता है, वही अक्षर है।

Highest of all is another Purusha, called Paramatma, who, pervading the three worlds, holds and sustains all. That is Imperishable, Ishwara.

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः ।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥ १५-१८॥
Yasmātkṣaramatīto'hamakṣarādapi cottamaḥ **/**
Ato'smi loke vede ca prathitaḥ puruṣottamaḥ **//** *15-18* **//**

मैं क्षर और अक्षर से परे हूँ, वेद कथित पुरुषोत्तम हूँ, अक्षर से भी उत्तम हूँ।

And for that reason, I am above and beyond the Kshara (mutable) and the Akshara (Immutable jiva), the highest, Ultimate. Therefore in the world and in the Veda, I am known as Purushottama, the highest transcendent Purusha.

यो मामेवमसम्मूढो जानाति पुरुषोत्तमम् ।
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत ॥ १५-१९॥
Yo māmevamasammūḍho jānāti puruṣottamam **/**
SA sarvavidbhajati māṃ sarvabhāvena bhārata **//** *15-19* **//**

मुझे पुरुषोत्तम रूप में विद्वान जानते हैं। हे भारत, सर्व भाव से विद्वान मुझे भजते हैं।

Whoever, intelligent and wide-awake, knows Me as Purushottama, every way, every style and form, serves me, worships me, O Bharata.

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ ।
एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत ॥ १५-२०॥
Iti guhyatamaṃ śāstramidamuktaṃ mayānagha **/**
Etadbuddhvā buddhimānsyātkṛtakṛtyaśca bhārata **//** *15-20* **//**

हे निष्पाप, ह भारत, यह रहस्यमय शास्त्र कहा गया। इसको जानकर मनुष्य बुद्धिमान हो जाता है, कृत्कृत्य हो जाता है।

Thus, O sinless, I have spoken of the most secret, most sacred shastra, divine knowledge.Having known this, any intelligent person feels blest and self-fulfilled.

CHAPTER-16

(देवासुर संपन्न विभाग थोड़ा)

श्रीभगवानुवाच ।
अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥ १६-१॥
Śrībhagavānuvāca **/**
Abhayaṃ sattvasaṃśuddhirjñānayogavyavasthitiḥ **/**
Dānaṃ damaśca yajñaśca svādhyāyastapa ārjavam **//** *16-1* **//**

श्री भगवान् ने कहा:

अभय, अनंत कारण का ज्ञान, मन की शुद्धि, तत्वज्ञान के लिए योग साधना, दान, इंद्रियों पर वश, यज्ञ, स्वाध्याय, तप, सरलता.....

Shree Bhagawan says:
Fearlessness, purity of heart and mind, constant dedication to the pursuit of knowledge and yoga, charity, self control, yajna (creative acts of social good), serious study, austerity, simplicity and naturalness.

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥ १६-२॥
Ahiṃsā satyamakrodhastyāgaḥ śāntirapaiśunam **/**
Dayā bhūteṣvaloluptvaṃ mārdavaṃ hrīracāpalam **//** *16-2* **//**

अहिंसा, सत्य, क्रोध न करना, त्याग, निन्दा न करना, दया, हृदय की कोमलता, अनासक्ति, दुराचरण मे लज्जा, चपलता न होना.....

Nonviolence, love of truth, freedom from anger, non-attachment and renunciation, peace of mind, non-slander, compassion for all, non-greed, gentleness, love of good and shame for unworthiness, seriousness of conduct.

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता ।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥ १६-३॥
Tejaḥ kṣamā dhṛtiḥ śaucamadroho nātimānitā **/**
Bhavanti sampadaṃ daivīmabhijātasya bhārata **//** *16-3* **//**

तेज, क्षमाशीलता, धैर्य, शौच, द्रोह न करना, अभिमान न करना, यह संस्कारवान मनुष्य की दैवी संपत्ति हैं।

Vibrant splendour of vibrations, forgiveness, steadfastness, purity, non-jealousy, absence of pride, these are the divine virtues of noble inheritance and good character.

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ।
अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ सम्पदमासुरीम् ॥ १६-४॥
Dambho darpo'bhimānaśca krodhaḥ pāruṣyameva ca **/**
Ajñānaṃ cābhijātasya pārtha sampadamāsurīm ***// 16-4 //***

किसी को शारीरिक या मानसिक रूप से दबाना, घमण्ड, अभिमान, क्रोध, रूखापन, अज्ञान, आसुरी संपत्ति हं।

Empty self assertion, arrogance, pride, anger, discourtesy, ignorance, these are characteristic qualities of a negative personality.

दैवी सम्पद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता ।
मा शुचः सम्पदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव ॥ १६-५॥
Daivī sampadvimokṣāya nibandhāyāsurī matā **/**
Mā śucaḥ sampadaṃ daivīmabhijāto'si pāṇḍava ***// 16-5 //***

दैवी संपत्ति मोक्ष देने वाली होती है, आसुरी संपत्ति बंधन में डालती है। हे पांडव, चिंता न कर, दैवी संपत्ति लेकर जन्मा है।

Positive qualities of divine nature lead to freedom, and negative qualities lead to bondage, O Pandava. Don't worry. Your natural virtues are positive and divine.

द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन्दैव आसुर एव च ।
दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे शृणु ॥ १६-६॥
Dvau bhūtasargau loke'smindaiva āsura eva ca **/**
Daivo vistaraśaḥ prokta āsuraṃ pārtha me śṛṇu ***// 16-6 //***

दो प्रकार के व्यक्ति संसार में जन्म लेते हैं, दैवी वृत्ति वाले और आसुरी वृत्ति वाले। दैवी वृत्ति वालों का वृत्तान्त विस्तार से कह दिया है। आसुरी वृत्तिवालों का, हे पार्थ, सुनो।

There are two characteristic classes of people in the world: Positive and divine is one, Negative and demonic is the other. The Divine and positive have been described in detail, now know of the demonic people from me.

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः ।
न शौचं नापि चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते ॥ १६-७॥
Pravṛttiṃ ca nivṛttiṃ ca janā na vidurāsurāḥ /
Na śaucaṃ nāpi cācāro na satyaṃ teṣu vidyate // 16-7 //

संसार में प्रवृति और संसार से निवृत्ति अर्थात् लगाव या त्याग आसुरी वृत्ति वाले व्यक्ति जानते ही नहीं। वे न सत्य को जानते, न सदाचार को जानते और सत्य तो उनमें होता ही नहीं।

The negative characters know not of bondage and freedom. Nor is in their character any trace of purity, or good conduct, or truth.

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम् ।
अपरस्परसम्भूतं किमन्यत्कामहैतुकम् ॥ १६-८॥
Asatyamapratiṣṭhaṃ te jagadāhuranīśvaram **/**
Aparasparasambhūtaṃ kimanyatkāmahaitukam **//** *16-8* **//**

वे असत्य में टिके होते हैं। प्रतिष्ठा उनमें होती नहीं। सृष्टि को अनोश्वर कहते हैं। कहते हैं कि जगत तो पुरुष और स्त्री के मेल से ही बना है। केवल काम ही जगत का कारण है।

Lost in untruth, they have no faiths, they say the world is unreal, without any basis, having no master, no law, no God. They say that the world is not the creation of the interaction of cause and effect, finally, there is no cause other than desire of sex. No other cause there needs to be.

एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः ।
प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः ॥ १६-९॥
Etāṃ dṛṣṭimavaṣṭabhya naṣṭātmāno'lpabuddhayaḥ **/**
Prabhavantyugrakarmāṇaḥ kṣayāya jagato'hitāḥ **//** *16-9* **//**

इस निरीश्वर दृष्टि का सहारा लेकर वे मूर्ख अपने आत्मा को नष्ट करते हैं। अल्प बुद्धि हैं। वह उग्रकर्म करते हैं और जगत के विनाश के लिए कर्म करते हैं।

Taking recourse to this Godless point of view, men of dead souls and little intelligence arise passionate for action, working for the worlds loss against all good.

काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः ।
मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहान्प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः ॥ १६-१०॥
Kāmamāśritya duṣpūraṃ dambhamānamadānvitāḥ **/**
Mohādgṛhītvāsadgrāhānpravartante'śucivratāḥ **//** *16-10* **//**

मद और अभिमान से पूर्ण, न पूरी होन होने वाली इच्छाओं के सहारे, अज्ञान पूर्वक, झूठे विचारों को और गंदे व उल्टे व्रत लेकर, वह मोह में फंस जाते हैं। कोई काम उनका पूरा नहीं होता।

Taking on to desire beyond fulfillment, lost in arrogance, self-pride and madness of passion, pursuing values opposed to good and reality, they arise dedicated to evil and all round impurity.

चिन्तामपरिमेयां च प्रलयान्तामुपाश्रिताः ।
कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः ॥ १६-११॥
Cintāmaparimeyāṃ ca pralayāntāmupāśritāḥ **/**
Kāmopabhogaparamā etāvaditi niścitāḥ **//** *16-11* **//**

असीम चिंता लेकर ऐसे आसुरी व्यक्ति जीवन के सारे काम करते हैं, जीवन केवल काम उपभोग के लिए होता है, केवल यही उनकी निश्चित चिंता होती है, जो मृत्यु पर्यन्त चलती है और समाप्त नहीं होती।

Living for cares beyond the possibility of fulfilment, lasting for lifetime till death, in pursuit of desire and gratification, with the firm belief that this life is all and no more.

आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः ।
ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसञ्चयान् ॥ १६-१२॥
Āśāpāśaśatairbaddhāḥ kāmakrodhaparāyaṇāḥ **/**
Īhante kāmabhogārthamanyāyenārthasañcayān **//** *16-12* **//**

व्यर्थ की सैकड़ों आशाओं से बंधे हुए, काम और क्रोध में फंसे हुए, अन्याय से धन कमाने का प्रयास करते हुए, वे अपने जीवन को व्यर्थ खो देते हैं।

Bound in the snares of a hundred hopes and expectations, living for the sake of desire, with anger on the failure of desire, they live for desire and passionate fulfillment with money and means collected with the violation of justice and fair play.

इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम् ।
इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम् ॥ १६-१३॥
Idamadya mayā labdhamimaṃ prāpsye manoratham **/**
Idamastīdamapi me bhaviṣyati punardhanam **//** *16-13* **//**

मैंने आज यह प्राप्त कर लिया, कल एक और प्राप्ति करूंगा। मेरा इतना धन तो है, इतना और हो जाएगा, यही उनका जीवन है।

This have I achieved today, they say, tomorrow I must gain the rest of what I want. This is mine, this shall be mine too, more and more of wealth and wealth again.

असौ मया हतः शत्रुर्हनिष्ये चापरानपि ।
ईश्वरोऽहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान्सुखी ॥ १६-१४॥
Asau mayā hataḥ śatrurhaniṣye cāparānapi **/**
Īśvaro'hamahaṃ bhogī siddho'haṃ balavānsukhī **//** *16-14* **//**

आज मैंने इस शत्रु को मार दिया, कल इतने और शत्रुओं को मार दूंगा। मैं ईश्वर हूँ, भोगी हूँ, सिद्ध हूँ, बलवान हूँ, सुखो हूँ, मैं, मेरे जैसा कोई नहीं।

Today that I have killed, tomorrow I will kill the other opponents too. I am my own God, I enjoy what I want, I am perfect, strong and happy as I want to be.

आढ्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया ।
यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिताः ॥ १६-१५॥
Āḍhyo'bhijanavānasmi ko'nyo'sti sadṛśo mayā **/**
Yakṣye dāsyāmi modiṣya ityajñānavimohitāḥ **//** *16-15* **//**

मैं धनी हूँ, बड़े परिवार वाला हूँ, मुझ सा कोई नहीं, मैं यज्ञ करूंगा, दान दूंगा, खुशी मनाऊंगा, ऐसे अज्ञान से आसुरी आत्माएं ग्रस्त होते हैं।

I am rich, surrounded and supported by my own people. Who else can be equal to me? I shall perform yajna, I shall give in charity. I shall enjoy and celebrate. Thus they are lost in ignorance (of reality).

अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः ।
प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ ॥ १६-१६॥
Anekacittavibhrāntā mohajālasamāvṛtāḥ **/**
Prasaktāḥ kāmabhogeṣu patanti narake'śucau **//** *16-16* **//**

आसुरी आत्माएं एक चित्त नहीं होती, बिखरी सी रहती हैं, मोह जाल से ढकी हैं, काम भोग से घिरे हैं। गन्दे नरक में गिर जाते हैं।

They are divided and misled, various of minds and values. They are covered and bound by the snares of delusion. Hypnotized by desire and the search for fulfillment, they fall into the hell of dirt and impurity.

आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः ।
यजन्ते नामयज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम् ॥ १६-१७॥
Ātmasambhāvitāḥ stabdhā dhanamānamadānvitāḥ **/**
Yajante nāmayajñaiste dambhenāvidhipūrvakam **//** *16-17* **//**

आसुरी आत्मा व्यक्ति अपने ही अभिमान में पागल हो जाता है। अड़ियल होता है। धन और अपने अहंकार में अंधा हो जाता है। केवल नाम का यज्ञ करता है। धन के अभिमान में विधि पूर्वक कोई शुभ कार्य नहीं करता।

Puffed up with selfishness, deluded with money and power with the sense of honor and passion, lost and mad, they do perform yajna but only in name, with pride and self-love, but without rules and forms.

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः ।
मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः ॥ १६-१८॥
Ahaṅkāraṃ balaṃ darpaṃ kāmaṃ krodhaṃ ca saṃśritāḥ **/**
Māmātmaparadeheṣu pradviṣanto'bhyasūyakāḥ **//** *16-18* **//**

अहंकार, बल, आत्म घमण्ड, काम और क्रोध में अंधे होकर मेरी अर्थात् ईश्वर की निंदा भी करते हैं। यद्यपि ईश्वर तो सर्वव्यापी है, पर वे ईश्वर द्रोही भी हं।

Lost in pride, strength, arrogance, desire, anger, slander and jealousy, they hate and revile me though I am present at the heartcore of them as of all others.

तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान् ।
क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु ॥ १६-१९॥
Tānahaṃ dviṣataḥ krūrānsaṃsāreṣu narādhamān **/**
Kṣipāmyajasramaśubhānāsurīṣveva yoniṣu **//** *16-19* **//**

उन ईश्वर द्रोहियों, निर्दयी और संसार में नराधम प्राणियों को मैं सदा अशुभ आसुरी योनियों में डाल देता हूँ।

All those jealous, cruel, lowest of the low humans, I throw into forms of life which for all time are evil and demonic.

आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि ।
मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम् ॥ १६-२०॥
Āsurīṃ yonimāpannā mūḍhā janmani janmani **/**
Māmaprāpyaiva kaunteya tato yāntyadhamāṃ gatim **//** *16-20* **//**

हे कौंतेय, आसुरी योनियों में वे मूढ़ जन्म जन्मांतर तक अधम योनि में ही सड़ते रहते हैं, उनको ईश्वर प्राप्ति नहीं होती।

Thrown and suffering in demonic forms again and again, those fools, O Kaunteya, having forsaken me, reach the lowest of the low forms of existence.

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥ १६-२१॥
Trividhaṃ narakasyedaṃ dvāraṃ nāśanamātmanaḥ **/**
Kāmaḥ krodhastathā lobhastasmādetattrayaṃ tyajet **//** *16-21* **//**

इन अधमं आत्माओं के नकद्वार तीन कारणों से होते हैं: काम, क्राध और लोभ के कारण, इसलिये मनुष्य को चाहिये कि वह काम, क्रोध और लोभ को त्याग दे।

The gateway to hell which pollutes the atma for all time is of three kinds, and follows open through three causes: desire, anger and greed. Therefore man should give up all these three.

एतैर्विमुक्तः कौन्तेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः ।
आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम् ॥ १६-२२॥

Etairvimuktaḥ kaunteya tamodvāraistribhirnaraḥ **/**
Ācaratyātmanaḥ śreyastato yāti parāṃ gatim **//** *16-22* **//**

हे कौन्तेय, इन तीन अवगुणों से विमुक्त हो कर मनुष्य श्रेयस् को प्राप्त हो जाता है, और श्रेयस् कर्म के कारण परमगति को प्राप्त हो जाता है।

Kaunteya, when man, free from these three doors of darkness, behaves and pursues karma for the good of the atma, then alone he attains to the ultimate state of perfection.

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥ १६-२३॥

Yaḥ śāstravidhimutsṛjya vartate kāmakārataḥ **/**
Na sa siddhimavāpnoti na sukhaṃ na parāṃ gatim **//** *16-23* **//**

काम के कारण जो व्यक्ति शास्त्रोक्त विधि से कर्म नहीं करता, वह न सिद्धि को पाता है, न सुख को, न परम गति अर्थात् मोक्ष को ही प्राप्त होता है।

But whoever, for reasons of desire, gives up the shastriya (scriptural) way of action, he does not attain to the state of perfection or happiness or the ultimate state of Divinity and freedom.

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि ॥ १६-२४॥

Tasmācchāstraṃ pramāṇaṃ te kāryākāryavyavasthitau **/**
Jñātvā śāstravidhānoktaṃ karma kartumihārhasi **//** *16-24* **//**

हे अर्जुन, इसलिये शास्त्र ही तुम्हारे लिये सुकर्म का प्रमाण है, क्या करना है, क्या नहीं करना इसका प्रमाण है। इसलिय यह जानना चाहिये कि किसी कर्म के विषय में शास्त्र का विधान क्या होता है। शास्त्र विधान को जानकर ही मनुष्य को कर्म करना चाहिये।

Therefore shastra (scripture, Veda) alone is your authority in the law and practice of what is to be done and what is not to be done: This is the commandment and the prohibition.

CHAPTER-17

(श्रद्धात्रय विभाग योग)

अर्जुन उवाच ।
ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विताः ।
तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्वमाहो रजस्तमः ॥ १७-१॥
Arjuna uvāca **/**
Ye śāstravidhimutsṛjya yajante śraddhayānvitāḥ **/**
Teṣāṃ niṣṭhā tu kā kṛṣṇa sattvamāho rajastamaḥ **//** *17-1* **//**

अर्जुन ने पूछाः
हे कृष्ण, जो व्यक्ति शास्त्र विधि को छोड़कर, किन्तु श्रद्धा पूर्वक यज्ञ करते हैं उनकी निष्ठा कैसी होती है? वह निष्ठा सात्विकी होती है, या राजसी, या तामसी होती है?

Arjuna says:
Krishna, those who do not follow the shashtra style of action (proper ritual) but otherwise perform the yajna with devotion, how do you value or assess their dedication? Is it sattvic, rajasic or tamasic?

श्रीभगवानुवाच ।
त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा ।
सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु ॥ १७-२॥
Śrībhagavānuvāca **/**
Trividhā bhavati śraddhā dehināṃ sā svabhāvajā **/**
Sāttvikī rājasī caiva tāmasī ceti tāṃ śṛṇu **//** *17-2* **//**

श्रीभगवान् ने उत्तर दियाः
देह धारियों की श्रद्धा तीन प्रकार की होती है और वह उन के स्वभाव के अनुसार होती हैः वह सात्विकी भी हो सकती है, राजसी भी हो सकती है, और तामसी भी हो सकती है, सुनोः

Shri Bhagawan says:
Depending on their nature, the devotion of people is of three types: sattvic, rajasic or tamasic (high, middle or low; rational, passionate or dull). Listen to these.

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत ।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः ॥ १७-३॥
Sattvānurūpā sarvasya śraddhā bhavati bhārata **/**
Śraddhāmayo'yaṃ puruṣo yo yacchraddhaḥ sa eva saḥ **//** *17-3* **//**

हे भारत, मनुष्यों की श्रद्धा उनके अंतःकरण के अनुसार होती है, पुरुष श्रद्धावान् होता है, जैसी जिसकी श्रद्धा होती है वैसा ही मनुष्य होता है।

The character of the shraddha of all depends on the nature and character of the people, O Bharata. Man is by nature man of faith. As man's faith is, so is man.

यजन्ते सात्त्विका देवान्यक्षरक्षांसि राजसाः ।
प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः ॥ १७-४॥
Yajante sāttvikā devānyakṣarakṣāṃsi rājasāḥ **/**
Pretānbhūtagaṇāṃścānye yajante tāmasā janāḥ **//** *17-4* **//**

सात्विक पुरुष देवों का यजन करते हैं। राजसी पुरुष यक्ष और राक्षसों का यजन करते हैं। अन्य तामसी पुरुष प्रेत और भूत आत्माओं का यजन करते हैं।

Men of sattvic nature worship devas. Rajasic men worship yakshas and the rakshasas (destroyers). And tamasic men worship the dead and the ghosts.

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः ।
दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः ॥ १७-५॥
Aśāstravihitaṃ ghoraṃ tapyante ye tapo janāḥ **/**
Dambhāhaṅkārasaṃyuktāḥ kāmarāgabalānvitāḥ **//** *17-5* **//**

जो मनुष्य शास्त्र विधि को छोड़कर घोर तप करते हैं, और दम्भ और अहंकार में फंस कर काम, राग और बल से ग्रस्त हो कर जीवन को व्यर्थ कर देते हैं, तप के आाधार पर उनकी श्रद्धा राजसी कही जाएगी।

Those people who practice austere rituals not prescribed by shashtras and are lost in arrogance and pride, dedicated to desire, attachment and pride of strength....

कर्षयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः ।
मां चैवान्तःशरीरस्थं तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान् ॥ १७-६॥
Karṣayantaḥ śarīrasthaṃ bhūtagrāmamacetasaḥ **/**
Māṃ caivāntaḥśarīrasthaṃ tānviddhyāsuraniścayān **//** *17-6* **//**

कुछ अभागे और मूर्ख लोग भूखे प्यासे रहकर अपने शरीर को निष्प्राण करलेते हैं, वे आसुरी भाव मनुष्य, ईश्वर को भूल जाते हैं, यद्यपि ईश्वर तो सर्वव्यापो है। उनकी श्रद्धा तामसी होती है।

They strain the mind and senses of the body, foolish as they are in understanding, and ignore me although I am present at the closest in their very heart. Know that they are, for sure, asuras (demons) by nature.

आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः ।
यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमं शृणु ॥ १७-७॥
Āhārastvapi sarvasya trividho bhavati priyaḥ **/**
Yajñastapastathā dānaṃ teṣāṃ bhedamimaṃ śṛṇu **//** *17-7* **//**

इन तीनों प्रकार के मनुष्यो का प्रिय आहार भी तीन प्रकार का होता है। इनके यज्ञ, तप और दान में भी भेद होता है। अब भेद को सुनो।

The food also of all people is favourite with them in three ways. In addition, their yajna, tapas and dana (charity) also is of three orders. Listen to that difference from me.

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः ।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः ॥ १७-८॥
Āyuḥsattvabalārogyasukhaprītivivardhanāḥ **/**
Rasyāḥ snigdhāḥ sthirā hṛdyā āhārāḥ sāttvikapriyāḥ **//** *17-8* **//**

सात्विक पुरुषों को जो भोजन प्रिय होते हैं व भोजन आयु, बुद्धि, बल, आरोग्य, सुख, और प्रेम को बढ़ाने वाले होते हैं। सात्विक पुरुषों को रसीले, चिकने, स्थिर रहने वाले, मन मोहक पदार्थ अच्छे लगते हैं।

The foods too which are the people’s favourite are of three types: Favourite food of the sattvic people are promoters of age, intelligence, energy, good health, well being, and love. In addition, they are sweet, soft, steady, and good for the heart.

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ।
आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ॥ १७-९॥
Kaṭvamlalavaṇātyuṣṇatīkṣṇarūkṣavidāhinaḥ **/**
Āhārā rājasasyeṣṭā duḥkhaśokāmayapradāḥ **//** *17-9* **//**

कडवे, खट्टे, नमकीन, गरम, तीखे, रूखे, दाहक जो दुःख, शोक और रोग बढ़ाने वाले भोजन राजसी प्रवृत्ति वाले पुरुषों को अच्छे लगते हं।

Bitter, sour, salty, hot, sharp, dry and burning, are the foods which the rajasic people love, and they cause pain, grief and indigestion.

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत् ।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम् ॥ १७-१०॥
Yātayāmaṃ gatarasaṃ pūti paryuṣitaṃ ca yat **/**
Ucchiṣṭamapi cāmedhyaṃ bhojanaṃ tāmasapriyam **//** *17-10* **//**

अधपका, नीरस, दुर्गन्ध, बासी और भूठा, उच्छिष्ट, अपवित्र भोजन तामस् वृत्ति पुरुषों को अच्छा लगता है।

Food which is half cooked or devitalized, too old or tasteless, putrid or stale, or left over, or unclean, that food is loved by tamasic people.

अफलाकाङ्क्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते ।
यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः ॥ १७-११॥
Aphalākāṅkṣibhiryajño vidhidṛṣṭo ya ijyate **/**
Yaṣṭavyameveti manaḥ samādhāya sa sāttvikaḥ **//** *17-11* **//**

फल की इच्छा के बिना जो यज्ञ कर्म विधि पूर्वक किया जाता है, वह सात्विक होता है। एसा यज्ञ मन को एकाग्र करके किया जाता है।

Yajna which is performed according to the instructions of the shastra by people who do it as duty and not for a reward, with concentration of the mind, that yajna is sattvic.

अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत् ।
इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम् ॥ १७-१२॥
Abhisandhāya tu phalaṃ dambhārthamapi caiva yat **/**
Ijyate bharataśreṣṭha taṃ yajñaṃ viddhi rājasam **//** *17-12* **//**

जो यज्ञ कर्म फल की इच्छा से दिखावे के रूप में किया जाता है, हे भरत श्रेष्ठ, वह यज्ञ कर्म राजसी होता है।

That yajna which is performed for a reward, or for the love of pride and ostentation, that yajna, O best of the Bharatas, know that it is rajasic.

विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम् ।
श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते ॥ १७-१३॥
Vidhihīnamasṛṣṭānnaṃ mantrahīnamadakṣiṇam **/**
Śraddhāvirahitaṃ yajñaṃ tāmasaṃ paricakṣate **//** *17-13* **//**

शास्त्रोक्त विधिहीन, दक्षिणाहीन, श्रद्धा हीन जो यज्ञ कर्म कियाजाता है, वह तामस कहलाता है।

That yajna which is performed without the Shastra instructions, without the distribution of gifts of holy food, without Veda mantras and gifts for others, without shraddha (complete devotion), that is called tamasic.

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम् ।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते ॥ १७-१४॥

Devadvijaguruprājñapūjanaṃ śaucamārjavam **/**
Brahmacaryamahiṃsā ca śārīraṃ tapa ucyate **//** *17-14* **//**

देव, ब्राह्मण, गुरु, विद्वान की सेवा, शुद्धि और सरलता, ब्राह्मचर्य, अहिंसा, ये सब शरीर के तप कह जाते हैं।

Respect for and service to devas, brahmanas, teachers, and the learned men of knowledge and wisdom, purity of body, mind and soul, simplicity and naturalness, brahmacharya and non-violence, with love and respect for life, that is called bodily tapas.

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् ।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते ॥ १७-१५॥
Anudvegakaraṃ vākyaṃ satyaṃ priyahitaṃ ca yat **/**
Svādhyāyābhyasanaṃ caiva vāṅmayaṃ tapa ucyate **//** *17-15* **//**

शान्तिमय भाषा, सत्य वचन, प्रिय और हितकारी शब्द व्यवहार, स्वाध्याय साधना, ये सब वाणीमय तप कहलाता है।

The speech which is peaceful and peaceable, true and useful to all you love, and practice of self-study and good books, that is called tapas of the word and tongue.
मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः ।
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते ॥ १७-१६॥
Manaḥ prasādaḥ saumyatvaṃ maunamātmavinigrahaḥ **/**
Bhāvasaṃśuddhirityetattapo mānasamucyate **//** *17-16* **//**

मानसिक प्रसन्नता, सौम्य आचरण, मौन, मन और आत्मा नियन्त्रण शुद्ध भाव, यह मानसिक तप है।
Peace of mind, simplicity and positivity of attitude, silence, self-control, purity of your nature and character, this is called mental tapas.

श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरैः ।
अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते ॥ १७-१७॥
Śraddhayā parayā taptaṃ tapastattrividhaṃ naraiḥ **/**
Aphalākāṅkṣibhiryuktaiḥ sāttvikaṃ paricakṣate **//** *17-17* **//**

श्रद्धा पूर्वक तप जो मनुष्य करत हैं, वह तीन प्रकार का होता है। फल की इच्छा के बिना जो तप युक्तात्मा पुरुष करते हैं, वह सात्विक कहलाता है।

Tapas, which is practised with perfect faith and devotion by people is also of three orders: tapas performed with devotion without the expectation of reward is called sattvic.

सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत् ।
क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमध्रुवम् ॥ १७-१८॥
Satkāramānapūjārthaṃ tapo dambhena caiva yat **/**
Kriyate tadiha proktaṃ rājasaṃ calamadhruvam **//** *17-18* **//**

जो तप किसी के सत्कार के लिये, मानार्थ या पूजा के लिये किया जाता है या दिखावे के लिये किया जाता है, वह राजसी तप कहलाता है, उसका फल चलायमान होता है, टिकाऊ नहीं होता।

Tapas which is done for the sake of winning respect, honor and high regard for the self, which is done only for show off and self-pride here on earth, that is rajasic, short-lived and unsteady.

मूढग्राहेणात्मनो यत्पीडया क्रियते तपः ।
परस्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम् ॥ १७-१९॥
Mūḍhagrāheṇātmano yatpīḍayā kriyate tapaḥ **/**
Parasyotsādanārthaṃ vā tattāmasamudāhṛtam **//** *17-19* **//**

जो तप मूखतापूर्ण, पीडा युक्त, दूसरे को दुःख देने की भावना से किया जाता है, वह तामस् कहा जाता है।

Tapas which is done with self-torture and self-delusion of the atma, which causes pain and suffering with frustration to others, that is called tamasic.

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे ।
देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम् ॥ १७-२०॥
Dātavyamiti yaddānaṃ dīyate'nupakāriṇe **/**
Deśe kāle ca pātre ca taddānaṃ sāttvikaṃ smṛtam **//** *17-20* **//**

जो दान, धर्म समभ्क कर अनुपकारी को भी दिया जाता है, देश, काल तथा पात्र को समभ्क कर दिया जाता है वह दान सात्विक समभ्का जाता है।

Dana (gift, charity) which is given as a matter of social duty, without any expectation of return or reward by the giver from the beneficiary, at the place where it is needed, at the time it is needed and for the person or cause it is needed for, that charity is sattvic.

यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः ।
दीयते च परिक्लिष्टं तद्दानं राजसं स्मृतम् ॥ १७-२१॥
Yattu pratyupakārārthaṃ phalamuddiśya vā punaḥ **/**
Dīyate ca parikliṣṭaṃ taddānaṃ rājasaṃ smṛtam **//** *17-21* **//**

जो दान कष्ट से दिया जाता है, फल की इच्छा से, या बदले में कुछ लाभ के लिये दिया जाता है, वह दान राजसी होता है।

The gift which is given for a return in gift form or, again, given in expectation of some fruit, or given with some difficulty or unwillingly, that is regarded as rajasic.

अदेशकाले यद्दानमपात्रेभ्यश्च दीयते ।
असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम् ॥ १७-२२॥
Adeśakāle yaddānamapātrebhyaśca dīyate **/**
Asatkṛtamavajñātaṃ tattāmasamudāhṛtam **//** *17-22* **//**

बिना देशकाल समझे जो दान अपात्र को बिना सत्कार, तिरस्कार से दिया जाता ह, वह दान तामस् माना जाता है।

Gift given to undeserving persons all for wrong causes, at a wrong place at the wrong time, without respect and even with contempt, that gift is tamasic.

ॐतत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः ।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा ॥ १७-२३॥
Oṁtatsaditi nirdeśo brahmaṇastrividhaḥ smṛtaḥ **/**
Brāhmaṇāstena vedāśca yajñāśca vihitāḥ purā **//** *17-23* **//**

ओ3म्, तत् सत् ब्रह्म का यह निर्देश तीन प्रकार से माना गया है। इसी निर्देश से सृष्टि के आदि में वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ और यज्ञ रचे गये थे।

'Aum tat sat': this three syllabled symbolic indication of Brahman is universally known, remembered and chanted. The Vedas, Vedic commentaries and Vedic karmas, i. e., yajnas, all were ordained by That (Brahman) at the beginning of creative evolution.

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपःक्रियाः ।
प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम् ॥ १७-२४॥
Tasmādomityudāhṛtya yajñadānatapaḥkriyāḥ **/**
Pravartante vidhānoktāḥ satataṃ brahmavādinām **//** *17-24* **//**

ओ3म् बोल कर ब्रह्मवादियों के यज्ञ, दान, तप सब कार्य विधिपूर्वक प्रारम्भ होते हैं। यही विधान है सदा के लिये।

For this very reason, all yajna, dana and tapas, rituals and practices, prescribed by the scriptural law for the devotees of Brahman, are always begun with the chant of Aum.

तदित्यनभिसन्धाय फलं यज्ञतपःक्रियाः ।

दानक्रियाश्च विविधाः क्रियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभिः ॥ १७-२५॥
Tadityanabhisandhāya phalaṃ yajñatapaḥkriyāḥ **/**
Dānakriyāśca vividhāḥ kriyante mokṣakāṅkṣibhiḥ **//** *17-25* **//**

तत् शब्द से ब्रह्म का निर्देश करके मोक्ष पद इच्छुक, फल की इच्छा न करके अपने सब यज्ञ, तप और दान इत्यादि क्रिया करते हैं। तत् शब्द का अर्थ है केवल वही सत्य है।
All the different (manifold) acts such as yajna, tapas and dana are done by the seekers of Moksha (ultimate freedom from the world of change), for 'That', when they do so without all expectations of the fruit of action.

'That' is the indication of Brahma, 'Aum' is the Word for what is indicated, otherwise Brahma is the Reality, Consciousness and Bliss (sat-chit-anand) beyond all language.

सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते ।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते ॥ १७-२६॥
Sadbhāve sādhubhāve ca sadityetatprayujyate **/**
Praśaste karmaṇi tathā sacchabdaḥ pārtha yujyate **//** *17-26* **//**

वही सत्य है, वही साधु है, हे पार्थ, इसी अर्थ में सत् शब्द हा प्रयोग होतां है। उत्तम कर्म के अर्थ में ब्रह्म का यही निर्देश है।
'Sat' is used in the sense of The True and The Good, Partha, in relation to any action which is good and true worth appreciation.

Note: Aum tat sat may be understood at two levels:

1. 'Aum', the sound indication of Brahma, is True (Ultimate Reality), the Good, and the Beautiful: Sat, Chit, Ananda.
2. All action dedicated to Brahma begins with Aum, it is good because it is for That, and it is 'sadhu' because it is dedicated to That, which means it is not for anything other than Itself and for That.

यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते ।
कर्म चैव तदर्थीयं सदित्येवाभिधीयते ॥ १७-२७॥
Yajñe tapasi dāne ca sthitiḥ saditi cocyate **/**
Karma caiva tadarthīyaṃ sadityevābhidhīyate **//** *17-27* **//**

यज्ञ, तप और दान में जो सदा सत्य और स्थिति है, वही सत्य है, निष्काम कर्म में भी जो स्थिति है, वह भी सत्य है।

In yajna, in tapas, and in dana, ‘Sat’ means constancy, without the least possibility of doubt or disturbance, and because all karma is for That, hence it is called Sat.

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत् ।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह ॥ १७-२८॥
Aśraddhayā hutaṃ dattaṃ tapastaptaṃ kṛtaṃ ca yat **/**
Asadityucyate pārtha na ca tatpretya no iha **//** *17-28* **//**

बिना श्रद्धाके जो दान दिया जाता है, जो आहुति डाली जाती हैं, जो तप किया जाता है, सब असत्य है, यहां भी और वहां भी। श्रद्धापूर्वक यह भी सत्य है, वह भी सत्य है। ओ3म् तत् सत् यही सत्य है।
Any action whether it is offered in yajna, or given as dana, or it is done for tapas, if it is performed without shraddha (faith), it is ‘asat’, false, because it is not real, not good, not beautiful, here in this life and in the next life. If it is done with shraddha (Devotion), it is Satya, here as well as there.

CHAPTER-18
(शरणागति योग)

अर्जुन उवाच ।
संन्यासस्य महाबाहो तत्त्वमिच्छामि वेदितुम् ।
त्यागस्य च हृषीकेश पृथक्केशिनिषूदन ॥ १८-१॥
Arjuna uvāca **/**
Saṃnyāsasya mahābāho tattvamicchāmi veditum **/**
Tyāgasya ca hṛṣīkeśa pṛthakkeśiniṣūdana **//** *18-1* **//**

अर्जुन ने पूछाः
हे महाबाहो, हे हृषोकेश, हे केशिनिष्दन, मैं सन्यास और त्याग के सम्बन्ध में अलग अलग जानना चाहता हूँ।

Says Arjuna:
Mahabaho, I wish to know the essential nature and meaning of Sanyasa, and, O Hrishikesha, O Keshinishudana, I wish to know the essential nature and meaning of tyaga (renunciation) separately.

श्रीभगवानुवाच ।
काम्यानां कर्मणां न्यासं संन्यासं कवयो विदुः ।
सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः ॥ १८-२॥
Śrībhagavānuvāca **/**
Kāmyānāṃ karmaṇāṃ nyāsaṃ saṃnyāsaṃ kavayo viduḥ **/**
Sarvakarmaphalatyāgaṃ prāhustyāgaṃ vicakṣaṇāḥ **//** *18-2* **//**

श्री भगवान् ने कहाः
विद्वान काम्य कर्मो के त्याग को सन्यास समभते हैं। विचारवान् पुरुष कर्मफल के त्यागको त्याग कहते हैं।

Says the Lord:
The wise say that Sanyasa means renunciation of actions which ought to be done. But men of wisdom and vision say that complete renunciation of the fruits of action is Sanyasa.

त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिणः ।
यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमिति चापरे ॥ १८-३॥
Tyājyaṃ doṣavadityeke karma prāhurmanīṣiṇaḥ **/**

Yajñadānatapaḥkarma na tyājyamiti cāpare **//** *18-3* **//**

मनीषी विद्वान कहते हैं कि कर्म ही दोष के समान त्याज्य है। सो कर्मत्याग ही त्याग है। कुछ विद्वानों का मत है कि यज्ञ, दान और तप ऐसे कर्म हैं कि उनका त्याग नहीं करना चाहिये।

Certain men of thought say that karma itself is worth giving up like evil, while certain others say that actions such as yajna, dana and tapas should not be given up.

निश्चयं शृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम ।
त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः सम्प्रकीर्तितः ॥ १८-४॥
Niścayaṃ śṛṇu me tatra tyāge bharatasattama **/**
Tyāgo hi puruṣavyāghra trividhaḥ samprakīrtitaḥ **//** *18-4* **//**

हे श्रेष्ठ भारत, मेरा त्याग के सम्बन्ध में निश्चित विचार सुनोः हे महावीर, त्याग तीन प्रकार का होता है।

O blessed son of the Bharatas, on the subject of tyaga (renunciation), listen to me carefully: Tyaga, O best and strongest of men, tyaga is described positively as three-fold, in three ways.

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥ १८-५॥
Yajñadānatapaḥkarma na tyājyaṃ kāryameva tat **/**
Yajño dānaṃ tapaścaiva pāvanāni manīṣiṇām **//** *18-5* **//**

यज्ञ, दान, तप, ये कर्म त्याज्य नहीं हैं, ये कर्म तो करने चाहियें। यज्ञ, दान और तप तो मनीषी पुरुषों को पवित्र करनेवाले हैं।

Karma such as yajna, dana and tapas should not be given up, that must be done. Yajna, dana and tapas, these actions are purifiers of men of thought and wisdom.

एतान्यपि तु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा फलानि च ।
कर्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम् ॥ १८-६॥
Etānyapi tu karmāṇi saṅgaṃ tyaktvā phalāni ca **/**
Kartavyānīti me pārtha niścitaṃ matamuttamam **//** *18-6* **//**

ये कर्म कर्मफल की इच्छा के बिना, फल संग छोड़कर, करने चाहियें। यह मेरा उत्तम और निश्चित मत है कि ये कर्म करने चाहियें।

These karmas, of course, are to be done without attachment and without expectation of result (personal fruit). ‘These karmas are to be done as ‘my duty,’ Partha, this is

my definite and final view.

नियतस्य तु संन्यासः कर्मणो नोपपद्यते ।
मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः ॥ १८-७॥
Niyatasya tu saṃnyāsaḥ karmaṇo nopapadyate **/**
Mohāttasya parityāgastāmasaḥ parikīrtitaḥ ***// 18-7 //***

नियत कर्म को छोड़ना नहीं चाहिये। मोह के कारण उस कर्म का छोड़ना तामस् त्याग कहा जायेगा।
The renunciation of prescribed karma is not proper. The renunciation of that karma for the reason of delusion is described as tyaga of the lowest order.

दुःखमित्येव यत्कर्म कायक्लेशभयात्त्यजेत् ।
स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत् ॥ १८-८॥
Duḥkhamityeva yatkarma kāyakleśabhayāttyajet **/**
Sa kṛtvā rājasaṃ tyāgaṃ naiva tyāgaphalaṃ labhet ***// 18-8 //***

यदि किसी कर्म के करने में भय हो, शरीर को दुःख हो, और यदि भय और दुःख के कारण उस कर्म को छोड़ दिया जाये, तो उस कर्म त्याग को राजसी त्याग कहा जायेगा। और उस कर्मफल स भी त्यागी पुरुष वंचित रहेगा।
If there is duty to be done and you miss it because it involves bodily difficulty or it is mentally painful, that remiss is rajasic, and surely you will miss the fruit of it according to the law of nature.

कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन ।
सङ्गं त्यक्त्वा फलं चैव स त्यागः सात्त्विको मतः ॥ १८-९॥
Kāryamityeva yatkarma niyataṃ kriyate'rjuna **/**
Saṅgaṃ tyaktvā phalaṃ caiva sa tyāgaḥ sāttviko mataḥ ***// 18-9 //***

यदि कोई कर्म करने योग्य हो और वह किया भी जाये, फल संग के बिना, फल की इच्छा को छोड़कर किया जाये, तो वह फलत्याग सात्विक कहा जायेगा।
Arjuna, duty is duty, prescribed duty must be done as duty but without attachment and expectation of fruit. Such renunciation of attachment and fruit is sattvic.

न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते ।
त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः ॥ १८-१०॥
Na dveṣṭyakuśalaṃ karma kuśale nānuṣajjate **/**
Tyāgī sattvasamāviṣṭo medhāvī chinnasaṃśayaḥ ***// 18-10 //***

यदि कोई व्यक्ति अनिच्छत कर्म से द्वेष न करे, उस कर्म को करले, और इच्छा कर्म से फल की आशा न करे, तो ऐसे त्यागी पुरुष को सत्त्व, सच्चा त्यागी, मेधावी और असंशयवान् त्यागी सब भला व्यक्ति कहेंगे।

The man of renunciation, settled in sattva, intelligent and free from doubt, neither hates a disagreeable duty, nor covets an agreeable.

न हि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः ।
यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते ॥ १८-११॥
Na hi dehabhṛtā śakyaṃ tyaktuṃ karmāṇyaśeṣataḥ **/**
Yastu karmaphalatyāgī sa tyāgītyabhidhīyate **//** *18-11* **//**

देह धारी मनुष्य के लिये सभी कर्मों का त्याग तो सम्भव नहीं है, किन्तु यदि मनुष्य कर्मफल की आशा का त्याग करदे, तो वह त्यागी, सच्चा त्यागी कहा जायेगा।

As long as man lives in the body, it is not possible to give up karma completely. The real man of renunciation is he who gives up all expectation of the fruit of karma.

अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम् ।
भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु संन्यासिनां क्वचित् ॥ १८-१२॥
Aniṣṭamiṣṭaṃ miśraṃ ca trividhaṃ karmaṇaḥ phalam **/**
Bhavatyatyāgināṃ pretya na tu saṃnyāsināṃ kvacit **//** *18-12* **//**

कर्मफल तीन प्रकार का होता है: इष्ट, अनिष्ट और मिश्रित। जो कर्मफल का त्याग नहीं करते, उनका मरण के पश्चात् ऐसा फल मिलता है। परन्तु जिन्होंने कर्मफल आशा का त्याग कर दिया है वे कर्मबन्ध से मुक्त हैं।

The fruit of karma is threefold: agreeable, disagreeable, and mixed; those who have not renounced it (the fruit) receive it even after death. And those who renounce the expectation while living, remain free.

पञ्चैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे ।
साङ्ख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम् ॥ १८-१३॥
Pañcaitāni mahābāho kāraṇāni nibodha me **/**
Sāṅkhye kṛtānte proktāni siddhaye sarvakarmaṇām **//** *18-13* **//**

हे महाबाहु अर्जुन, सब कर्मों की सिद्धि के लिये पांच कारण सांख्य शास्त्र में कहे गये हैं, वे कारण तुम मुझसे जान लो:

Mahabahu, five are the causes of karma, know it from me. They are described in the conclusive Sankhya philosophy, for the accomplishment of all actions.

अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम् ।
विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम् ॥ १८-१४॥
Adhiṣṭhānaṃ tathā kartā karaṇaṃ ca pṛthagvidham **/**
Vividhāśca pṛthakceṣṭā daivaṃ caivātra pañcamam **//** *18-14* **//**

ये पांच कारण ये हैं: अधिष्ठान (स्थान), कर्ता (कर्म करने वाला), करण (कर्म करने के साधन), चेष्टा (कर्म करने की इच्छा), और दैव (ईश्वर की इच्छा)।

They are: the locale (the place in the case of man), the doer (agent), instruments (means), various mental activities, all separately described. The fifth is providence, the unseen that watches all and controls all.

शरीरवाङ्मनोभिर्यत्कर्म प्रारभते नरः ।
न्याय्यं वा विपरीतं वा पञ्चैते तस्य हेतवः ॥ १८-१५॥
Śarīravāṅmanobhiryatkarma prārabhate naraḥ **/**
Nyāyyaṃ vā viparītaṃ vā pañcaite tasya hetavaḥ **//** *18-15* **//**

शरीर, शब्द और मन से जब मनुष्य किसी कार्य को प्रारम्भ करता है, तो उस कर्म के पांच हेतु होते हैं। वे शास्त्र विधि के अनुसार भी हो सकते हैं और विपरीत भी।

Whatever the work that man begins, whether with the body, tongue (word),and mind, just or unjust, these five are the causes of it.

तत्रैवं सति कर्तारमात्मानं केवलं तु यः ।
पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मतिः ॥ १८-१६॥
Tatraivaṃ sati kartāramātmānaṃ kevalaṃ tu yaḥ **/**
Paśyatyakṛtabuddhitvānna sa paśyati durmatiḥ **//** *18-16* **//**

ऐसा होने पर जो व्यक्ति केवल अपने आपको ही कर्ता समझता है, वह दुर्मति है, मूर्ख है, वह देखते हुए भी नहीं देखपा रहा।

This being as it is, the man who believes that he is the only and sole agent (doer), he sees himself as the doer because his understanding is limited (unaccomplished). It is defective in fact, because he does not see the truth.

यस्य नाहङ्कृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते ।
हत्वाऽपि स इमाँल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते ॥ १८-१७॥
Yasya nāhaṅkṛto bhāvo buddhiryasya na lipyate **/**
Hatvā'pi sa imānllokānna hanti na nibadhyate **//** *18-17* **//**

जो यह समझ लेता है कि मैं कर्ता नहीं हूँ उसकी बुद्धि कर्मबन्ध से लिपायमान नहीं होती। वह सारे संसार को मार कर भी कर्मबन्ध में नहीं फंसता।

He that believes that he is not the doer, he whose intelligence and awareness does not get involved, such a man, even having killed, does not kill, he does not get involved.

ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना ।
करणं कर्म कर्तेति त्रिविधः कर्मसङ्ग्रहः ॥ १८-१८॥
Jñānaṃ jñeyaṃ parijñātā trividhā karmacodanā **/**
Karaṇaṃ karma karteti trividhaḥ karmasaṅgrahaḥ ***// 18-18 //***

ज्ञान, ज्ञेय, ज्ञाता, तीन प्रकार की कर्म प्रेरणा है। तीन प्रकार के कर्ता, कर्म और करण हैं। यह कर्म के सम्बन्ध में सम्पूर्ण ज्ञान है।

Knowledge, the object of knowledge, and the knower, three are stimulants of action, and the instrument (means), karma itself, and the agent (doer) these three constitute the sum total of action.

ज्ञानं कर्म च कर्ता च त्रिधैव गुणभेदतः ।
प्रोच्यते गुणसङ्ख्याने यथावच्छृणु तान्यपि ॥ १८-१९॥
Jñānaṃ karma ca kartā ca tridhaiva guṇabhedataḥ **/**
Procyate guṇasaṅkhyāne yathāvacchṛṇu tānyapi ***// 18-19 //***

ज्ञान, कर्म और कर्ता प्रकृति के गुणों के अनुसार तीन प्रकार के हैं। यह इस प्रकार सांखय दर्शन में कहा गया है। इनको घ्यान से सुनोः

Knowledge, karma and the doer, each one of these is said to be of three kinds according to the science of natural mental qualities. Listen to that classification from me.

सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते ।
अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम् ॥ १८-२०॥
Sarvabhūteṣu yenaikaṃ bhāvamavyayamīkṣate **/**
Avibhaktaṃ vibhakteṣu tajjñānaṃ viddhi sāttvikam ***// 18-20 //***

सृष्टि के समस्त भूत प्राणयों में केवल एक अविनाशी भाव व्याप्त है, सब विभक्त भावों में केवल एक अविभक्त भाव है, यह ज्ञान सात्विक है, यह जानलो।

In all forms of existence, there is only one eternal imperishable undivided reality which looks as one, in all divided and different forms, that knowledge is of the first (sattvic) order.

पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान्पृथग्विधान् ।
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम् ॥ १८-२१॥
Pṛthaktvena tu yajjñānaṃ nānābhāvānpṛthagvidhān **/**
Vetti sarveṣu bhūteṣu tajjñānaṃ viddhi rājasam **//** *18-21* **//**

जो सृष्टि के सब भावों में और वस्तुओं में एक ही वास्तविकता को पृथक रूप में देखता है, वह ज्ञान राजसी है।

The knowledge by which, for reasons of its formal differentiation, man knows that it (one reality) is manifold and not one, that knowledge, know it to be rajasic.

यत्तु कृत्स्नवदेकस्मिन्कार्ये सक्तमहैतुकम् ।
अतत्त्वार्थवदल्पं च तत्तामसमुदाहृतम् ॥ १८-२२॥
Yattu kṛtsnavadekasminkārye saktamahaitukam **/**
Atattvārthavadalpaṃ ca tattāmasamudāhṛtam **//** *18-22* **//**

जो सृष्टि के एक ही कार्य में पूर्ण रूप से आसक्त है, और उसको भी अकारण समझता है, ऐसा अतत्व और अल्पज्ञान तामसी है, यह कहा जायेगा।

The knowledge which is limited to one of the formal differentiations as knowledge of the whole and all, without cause and purpose, superficial without the essence, that is tamasic.

नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम् ।
अफलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्सात्त्विकमुच्यते ॥ १८-२३॥
Niyataṃ saṅgarahitamarāgadveṣataḥ kṛtam **/**
Aphalaprepsunā karma yattatsāttvikamucyate **//** *18-23* **//**

जो नियत शास्त्रद्वारा कर्म कहा गया है, बिना रागद्वेष किया हुआ है, जो संग रहित और निष्काम है, वह कर्म सात्विक कहा गया है।

An act prescribed by Shastra, done as duty without personal attachment, free of love and hate, with no expectation of result, that is sattvic.

यत्तु कामेप्सुना कर्म साहङ्कारेण वा पुनः ।
क्रियते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतम् ॥ १८-२४॥
Yattu kāmepsunā karma sāhaṅkāreṇa vā punaḥ **/**
Kriyate bahulāyāsaṃ tadrājasamudāhṛtam **//** *18-24* **//**

जो कर्म फल की इच्छा से किया जाता है, अहंकार पूर्वक किया जाता है, परिश्रम से किया जाता है, वह कर्म राजसी कहा जाता है।

A strenuous act done by the doer with desire for a purpose and also with the pride of doing personally, that is rajasic.

अनुबन्धं क्षयं हिंसामनपेक्ष्य च पौरुषम् ।
मोहादारभ्यते कर्म यत्तत्तामसमुच्यते ॥ १८-२५॥
Anubandhaṃ kṣayaṃ hiṃsāmanapekṣya ca pauruṣam **/**
Mohādārabhyate karma yattattāmasamucyate **//** *18-25* **//**

जो कर्म बिना परिणाम, हानि, हिंसा और सामर्थ्य के विचारे, केवल मोह के कारण प्रारम्भ किया जाता है, वह तामसी कहलाता है।

An act which is undertaken with the pride of personal satisfaction without consideration of the consequence, loss, violence or competence, that act is tamasic karma.

मुक्तसङ्गोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः ।
सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारः कर्ता सात्त्विक उच्यते ॥ १८-२६॥
Muktasaṅgo'nahaṃvādī dhṛtyutsāhasamanvitaḥ **/**
Siddhyasiddhyornirvikāraḥ kartā sāttvika ucyate **//** *18-26* **//**

जो कर्ता संगमुक्त, अहंकारी नहीं है, धैर्यवान और साहसी है, जीत, हार की चिन्ता से मुक्त है, केवल कर्म करना धर्म है, एसा मानकर कर्म करता है, वह कर्ता सात्विक कहा जाता है।

The doer who is free from personal attachment and pride of the self as doer, but blessed with steadfastness and enthusiasm, and yet in the matter of duty, unperturbed with quality of success or failure, that doer is sattvic.

रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः ।
हर्षशोकान्वितः कर्ता राजसः परिकीर्तितः ॥ १८-२७॥
Rāgī karmaphalaprepsurlubdho hiṃsātmako'śuciḥ **/**
Harṣaśokānvitaḥ kartā rājasaḥ parikīrtitaḥ **//** *18-27* **//**

जो कर्ता रागद्वेष युक्त है, फल को आशा करता है, लालची है, हिंसा के लिये तैयार है, अशुद्ध ह्रदय है, हर्ष शोक ग्रस्त है, वह राजसी है।

The doer who is eager for the result of action, greedy, violent and impure of thought, easily moved by the joy of success and sorrow of failure, that doer is called rajasic.

अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठो नैष्कृतिकोऽलसः ।
विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते ॥ १८-२८॥
Ayuktaḥ prākṛtaḥ stabdhaḥ śaṭho naiṣkṛtiko'lasaḥ **/**
Viṣādī dīrghasūtrī ca kartā tāmasa ucyate **//** *18-28* **//**

जो भगवान् का भक्त नहीं है, अशिक्षित है, अभिमानी है, शठ है, दु:ख देने वाला है, आलसी है, विषादी है, दीर्घ सूत्री है, वह कर्ता तामसी कहा जाता है।

The doer who is undedicated, unrefined, stubborn, deceitful, slanderous, lazy, morose and undecisive, that is called tamasic.

बुद्धेर्भेदं धृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधं शृणु ।
प्रोच्यमानमशेषेण पृथक्त्वेन धनञ्जय ॥ १८-२९॥
Buddherbhedaṃ dhṛteścaiva guṇatastrividhaṃ śṛṇu **/**
Procyamānamaśeṣeṇa pṛthaktvena dhanañjaya **//** *18-29* **//**

बुद्धि और धैर्य के भी तीन प्रकार हैं, सुनो: वे पूर्णतया पृथक रूप में, हे धनंजय, कहे जाते हैं।

O Dhananjaya, listen now to three-fold qualitative classification of intelligence and constancy of character, each separately and in detail without exception as spoken by me.

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये ।
बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी ॥ १८-३०॥
Pravṛttiṃ ca nivṛttiṃ ca kāryākārye bhayābhaye **/**
Bandhaṃ mokṣaṃ ca yā vetti buddhiḥ sā pārtha sāttvikī **//** *18-30* **//**

जिस बुद्धि से मनुष्य संसार के प्रति प्रवृत्ति और निवृत्ति को जाने, कार्य और अकार्य को जाने, भय और अभय को जाने, बन्ध और मोक्ष को समझे, वह बुद्धि, हे पार्थ सात्विकी होती है।

The intelligence with which man makes the distinction between the love of life and renunciation of it, between what ought to be done and what not to be done, between the fearsome and the fearless, between bondage and freedom, that intelligence is sattvic.

यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च ।
अयथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी ॥ १८-३१॥
Yayā dharmamadharmaṃ ca kāryaṃ cākāryameva ca **/**
Ayathāvatprajānāti buddhiḥ sā pārtha rājasī **//** *18-31* **//**

जिस बुद्धि से धर्म और अधर्मको, कार्य और अकार्यको, यथावत् नहीं जानता, अपितु अयथावत् जानता है, हे पार्थ, वह बुद्धि राजसी है।

That intelligence which reveals Dharma and adharma, what ought to be done and what is not to be done, but reveals them not as they are in reality, that intelligence is rajasic.

अधर्मं धर्ममिति या मन्यते तमसावृता ।
सर्वार्थान्विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी ॥ १८-३२॥
Adharmaṃ dharmamiti yā manyate tamasāvṛtā **/**
Sarvārthānviparītāṃśca buddhiḥ sā pārtha tāmasī **//** *18-32* **//**

जो बुद्धि तमस् से ठको हुई, अन्धकार के कारण अधर्म को धर्म माने और संसार की सब वस्तुओं को विपरीत माने, वह बुद्धि तामसी होती है।

That intelligence which, blurred by dullness and incompetence (tamas), shows that adharma is Dharma, and all realities are what they are not, that intelligence is tamasic, lowest of the low.

धृत्या यया धारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः ।
योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्त्विकी ॥ १८-३३॥
Dhṛtyā yayā dhārayate manaḥprāṇendriyakriyāḥ **/**
Yogenāvyabhicāriṇyā dhṛtiḥ sā pārtha sāttvikī **//** *18-33* **//**

जिस स्वच्छ धृति (धैर्य) से, योग से, मन, प्राण और इन्द्रियों की सब क्रियाऐं संभाली जाती हैं वह धृति, हे पार्थ, सात्विकी होती है।

That inviolable constancy of character by which man holds on to the mind and activities of pranic and sense energy with yoga dedication, with no disturbance at all, that constancy of mind is sattvic.

यया तु धर्मकामार्थान्धृत्या धारयतेऽर्जुन ।
प्रसङ्गेन फलाकाङ्क्षी धृतिः सा पार्थ राजसी ॥ १८-३४॥
Yayā tu dharmakāmārthāndhṛtyā dhārayate'rjuna **/**
Prasaṅgena phalākāṅkṣī dhṛtiḥ sā pārtha rājasī **//** *18-34* **//**

हे अर्जुन, जिस धृति से फलका इच्छुक, संसार के प्रसंग में धर्म, अर्थ, कर्मादि के सन्दर्भ में चिन्तन करता है, वह धृति राजसी होती है।

The constancy by which man holds on to the pursuit of Dharma, means of living and fulfillment of desire with eagerness for the fruit of action according to the situation, that contancy is rajasic.

यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च ।
न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी ॥ १८-३५॥
Yayā svapnaṃ bhayaṃ śokaṃ viṣādaṃ madameva ca **/**
Na vimuñcati durmedhā dhṛtiḥ sā pārtha tāmasī **//** *18-35* **//**

जिस धृति के कारण मूर्ख व्यक्ति स्वप्न, भय, शोक, विषाद, मोह को नहीं छोड़ता, वह धृति तामसी होती है।

The constancy by which man, with persistent stupidity, holds on to and, does not give up, empty dreams in sleep, fear, sorrow, depression, even madness of passion and pride, that constancy is tamasic.

सुखं त्विदानीं त्रिविधं शृणु मे भरतर्षभ ।
अभ्यासाद्रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति ॥ १८-३६॥
Sukhaṃ tvidānīṃ trividhaṃ śṛṇu me bharatarṣabha **/**
Abhyāsādramate yatra duḥkhāntaṃ ca nigacchati **//** *18-36* **//**

हे भरतवंशी, सुनोः सुख भी तीन प्रकार का होता है, उस सुख के अभ्यास से मनुष्य, दुःख के अन्त को प्राप्त कर लेता है।

O best of the Bharatas, listen now to the threefold happiness, comfort and joy wherein man loves to enjoy by long practice and ends up with the end of suffering.

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम् ।
तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम् ॥ १८-३७॥
Yattadagre viṣamiva pariṇāme'mṛtopamam **/**
Tatsukhaṃ sāttvikaṃ proktamātmabuddhiprasādajam **//** *18-37* **//**

जिस सुख को पहले तो मनुष्य विष के समान समझता है, लेकिन वह अन्त में अमृत के समान हो जाता है, उसी से आत्मा और बुद्धि का प्रसाद मिल जाता है, वही सुख सात्विक होता है।

The joy which upfront appears like poison, but at the end is like nectar, that is said to be sattvic, it is joy of the atma and intelligence.

विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम् ।
परिणामे विषमिव तत्सुखं राजसं स्मृतम् ॥ १८-३८॥
Viṣayendriyasaṃyogādyattadagre’mṛtopamam **/**
Pariṇāme viṣamiva tatsukhaṃ rājasaṃ smṛtam **//** *18-38* **//**

जो सुख इन्द्रियों द्वारा प्रारम्भ में तो अमृत के समान अनुभव होता है, पर अन्त में विष जैसा लगता है, वह सुख राजसी होता है।

The pleasure which is obtained with the union of the senses with their cherished objects, and which upfront appears like nectar, but at the end is like poison, that pleasure is rajasic.

यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः ।

निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम् ॥ १८-३९॥
Yadagre cānubandhe ca sukhaṃ mohanamātmanaḥ **/**
Nidrālasyapramādotthaṃ tattāmasamudāhṛtam **//** *18-39* **//**

जो सुख प्रारम्भ एवं अन्त में आत्मा का सम्मोहन करता है, निद्रा, आलस्य और प्रमाद का कारण बनता है, वह सुख तामसी होता है।

The pleasure which to begin with and at the end is caused by delusion of the spirit, which arises from sleep, sloth and wanton negligence, that is tamasic.

न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः ।
सत्त्वं प्रकृतिजैर्मुक्तं यदेभिः स्यात्त्रिभिर्गुणैः ॥ १८-४०॥
Na tadasti pṛthivyāṃ vā divi deveṣu vā punaḥ **/**
Sattvaṃ prakṛtijairmuktaṃ yadebhiḥ syāttribhirguṇaiḥ **//** *18-40* **//**

पृथिवी, धुलोक या देवलोक में कोई वस्तु ऐसी नहीं है, जो प्रकृति के इन तीन गुणों से सम्बद्ध न हों।

There is nothing in the world, on earth, in heaven or among the devas born of these three modes of Prakrti which may ever be free of them.

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परन्तप ।
कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः ॥ १८-४१॥
Brāhmaṇakṣatriyaviśāṃ śūdrāṇāṃ ca parantapa **/**
Karmāṇi pravibhaktāni svabhāvaprabhavairguṇaiḥ **//** *18-41* **//**

हे परम तपस्वी अर्जुन, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के प्राकृतिक स्वभाव के अनुसार जो कर्म विभक्त किये गये हैं, उनका विभाजन इस प्रकार है।

O Paramtapa, the duties of Brahmanas, Kshatriyas, Vaishyas and Shudras are classified according to their nature and character born of their natural merit.

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च ।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ॥ १८-४२॥
Śamo damastapaḥ śaucaṃ kṣāntirārjavameva ca **/**
Jñānaṃ vijñānamāstikyaṃ brahmakarma svabhāvajam **//** *18-42* **//**

शम (मन की शान्ति), दम (मन और इन्द्रियों का नियंत्रण), शौच (शरीर और अन्तःकरण की शुद्धि), शान्ति (मन की शान्ति), अर्जवम् (सरलता), ज्ञान, विज्ञान, आस्तिक्य (वेद और ईश्वर विश्वास), ब्रह्मकर्म (संध्या, यज्ञ, पठन पाठन), यह ब्राह्मण कर्म स्वभाव के अनरूप हैं।

Peace of mind, self control, austerity, purity, patience, simplicity and naturalness, knowledge, practical realization of knowledge, and love of God with faith in the

reality of the world, that is the duty of Brahmanas according to their nature and character.

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम् ॥ १८-४३॥
Śauryaṃ tejo dhṛtirdākṣyaṃ yuddhe cāpyapalāyanam **/**
Dānamīśvarabhāvaśca kṣātraṃ karma svabhāvajam **//** *18-43* **//**

शौर्य (शूरवीर), तेज (स्वाभाविक तेज), धृति (धर्य), दाक्ष्य (युद्धकार्य में चतुराई), युद्ध में डट जाना, दान देना, ईश्वर में श्रद्धा, ये क्षत्रिय के स्वाभाविक गुण हैं।
Heroic courage, fiery energy, consistency of determination, expertise of tactics, steadfastness in battle, generosity of giving, and leadership with a sense of power, this is the characteristic duty of a Kshatriya.

कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् ।
परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ॥ १८-४४॥
Kṛṣigaurakṣyavāṇijyaṃ vaiśyakarma svabhāvajam **/**
Paricaryātmakaṃ karma śūdrasyāpi svabhāvajam **//** *18-44* **//**

खेती, गौरक्षा, व्यापार, वैश्य वर्ण के स्वाभाविक गुण हैं। सेवा, शूद्र का स्वाभाविक गुण हैं।
Farming, cow (cattle) breeding and development, trade and commerce, these are the characteristic duties of the Vaishyas. The characterstic duty of the Shudras is to provide ancillary services to the other three.

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः ।
स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तच्छृणु ॥ १८-४५॥
Sve sve karmaṇyabhirataḥ saṃsiddhiṃ labhate naraḥ **/**
Svakarmanirataḥ siddhiṃ yathā vindati tacchṛṇu **//** *18-45* **//**

अपने अपने स्वाभाविक कर्म में लगा हुआ व्यक्ति अपने कर्म में सिद्धि पा लेता है, यदि अपने स्वाभाविक कर्म के साथ साथ भगवद् भजन भी करता है। वह सिद्धि कैसे प्राप्त करता है सुनोः
Man achieves success and fulfillment by being busy with his own natural duties. How man, dedicated to his own duties, may achieve success and fulfillment, hear that now.

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम् ।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः ॥ १८-४६॥
Yataḥ pravṛttirbhūtānāṃ yena sarvamidaṃ tatam **/**
Svakarmaṇā tamabhyarcya siddhiṃ vindati mānavaḥ **//** *18-46* **//**

जिस शक्ति और जिस प्रभु से इस सृष्टि का प्रारम्भ होता है, जो इस सृष्टि में सर्वव्यापक है, अपने स्वाभाविक कर्म के द्वारा उस प्रभु की आराधना करके ही मनुष्य अपने कर्म में सिद्धि प्राप्त कर सकता है।

Wherefrom/Whereby the forms of life arise with their love to be and by which this whole world is created and pervaded, honor and worship, that by doing your own duty, this is the way man achieves success and self-fulfillment.

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।
स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥ १८-४७॥
Śreyānsvadharmo viguṇaḥ paradharmātsvanuṣṭhitāt **/**
Svabhāvaniyataṃ karma kurvannāpnoti kilbiṣam **//** *18-47* **//**

अपना स्वाभाविक कर्म ही धर्म है। अपना धर्म भी चाहे गुणहीन हो, और दूसरा धर्म चाहे कितने ही अच्छे प्रकार से पूरा किया गया हो, तब भी अपना ही धर्म कर्म अच्छा है।

One’s own duty and Dharma is better even though it be full of weaknesses. It is better than another's even though the other man’s is better to do and better done. Doing your own characteristic duty, man does not suffer any sin or remiss.

सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत् ।
सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः ॥ १८-४८॥
Sahajaṃ karma kaunteya sadoṣamapi na tyajet **/**
Sarvārambhā hi doṣeṇa dhūmenāgnirivāvṛtāḥ **//** *18-48* **//**

हे कौन्तेय, अपना स्वाभाविक कर्म चाहे दोष पूर्ण भी हो, फिरभी छोड़ना नहीं चाहिये। यूँ तो प्रत्येक कर्म में कोई न कोई त्रुटि होती है, जैसे, अग्नि धुएं से ढकी होती है, फिरभी स्वकर्म नहीं छोड़ना चाहिये।

Kaunteya, natural and characteristic work, a man should not give up, even though it may have certain weaknesses, because all works have some deficiency as fire too is accompanied with smoke.

असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः ।
नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां संन्यासेनाधिगच्छति ॥ १८-४९॥
Asaktabuddhiḥ sarvatra jitātmā vigataspṛhaḥ **/**
Naiṣkarmyasiddhiṃ paramāṃ saṃnyāsenādhigacchati **//** *18-49* **//**

जिसकी बुद्धि में आसक्ति नहीं है, जिसने अपने अन्तःकरण और आत्मा को जीत लिया, जिसकी चाह समाप्त हो गई। वह व्यक्ति निष्काम कर्म में परमसिद्धि, कर्मफल और फल की आशा को छोड़ कर ब्रह्मप्राप्त कर सकता है।

A man of understanding with non-attachment, self-controlled in all situations, risen above desire, transcends personality, and through the surrender of desire and expectation reaches the highest state of spiritual impersonality.

सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाप्नोति निबोध मे ।
समासेनैव कौन्तेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा ॥ १८-५०॥
Siddhiṃ prāpto yathā brahma tathāpnoti nibodha me **/**
Samāsenaiva kaunteya niṣṭhā jñānasya yā parā **//** *18-50* **//**

निष्काम कर्म में सिद्धि प्राप्त व्यक्ति ज्ञान प्राप्ति में परानिष्ठा और ब्रह्मप्राप्ति में निपुणता कैसे प्राप्त सकता है, यह मुझसे जानो।

Having reached the highest state of impersonality, how man attains to Brahma, know this from me in brief, since, O Kaunteya, that is the ultimate state of knowledge and divine commitment.

बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च ।
शब्दादीन्विषयांस्त्यक्त्वा रागद्वेषौ व्युदस्य च ॥ १८-५१॥
Buddhyā viśuddhayā yukto dhṛtyātmānaṃ niyamya ca **/**
Śabdādīnviṣayāṃstyaktvā rāgadveṣau vyudasya ca **//** *18-51* **//**

जिसकी बुद्धि शुद्ध हो गई है, जिसके अन्तःकरण और आत्मा में धृति स्थित होगयी है, जिसने शब्दादि विषयों को छोड़ दिया है, जिसने रागद्वेष को समाप्त कर दिया।

Blest with pure understanding, self-controlled with determination, having given up the love of words and other objects of sense, having cast off love and hate....

विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्कायमानसः ।
ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः ॥ १८-५२॥
Viviktasevī laghvāśī yatavākkāyamānasaḥ **/**
Dhyānayogaparo nityaṃ vairāgyaṃ samupāśritaḥ **//** *18-52* **//**

जो एकान्तवासी ह, और आशा निराशा से विरक्त, भाषा, मन और आत्मा एवं शरीर को वश में कर लिया है, वो घ्यानयोग से नित्य वैराग्य को प्राप्त हो जाता है।

Loving solitude, living on light food, having controlled his tongue, body and mind, dedicated to meditation, constant freedom from attachment....

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम् ।
विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ १८-५३॥
Ahaṅkāraṃ balaṃ darpaṃ kāmaṃ krodhaṃ parigraham **/**
Vimucya nirmamaḥ śānto brahmabhūyāya kalpate **//** *18-53* **//**

जिसने अहंकार, बल, घमण्ड, काम, क्रोध, धन का लालच छोड़ दिया और ममता को छोड़ शान्ति को प्राप्त कर लिया, तो, वह शान्तात्मा व्यक्ति ब्रह्म प्राप्ति के योग्य हो जाता है।

Free from pride, sense of strength, arrogance, love and anger, and the love of grabbing, free from selfishness, always at peace, such a man is fit for this state of divinity.

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति ।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥ १८-५४॥
Brahmabhūtaḥ prasannātmā na śocati na kāṅkṣati **/**
Samaḥ sarveṣu bhūteṣu madbhaktiṃ labhate parām **//** *18-54* **//**

जो प्रसन्नात्मा व्यक्ति ब्रह्म को प्राप्त कर लेता ह, वह न शोक करता है, न चिन्ता, न कोई इच्छा ही करता है। वह सब प्राणियों के साथ समभाव से बरतता है और समभाव से पराभक्ति को प्राप्त हो जाता है।

Ready for the state of divinity, happy at heart, he neither worries nor desires. Always equanimous with all living beings, he wins the state of service and dedication to me.

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः ।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् ॥ १८-५५॥
Bhaktyā māmabhijānāti yāvānyaścāsmi tattvataḥ **/**
Tato māṃ tattvato jñātvā viśate tadanantaram **//** *18-55* **//**

वह व्यक्ति मुझे तत्त्व से जान कर मुझे अनन्तर आन मिलता है।

With service and dedication to me, he knows and realizes me, who and what I am in the essence, and having realized me that way in truth, he joins me in no time.

सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मद्व्यपाश्रयः ।
मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम् ॥ १८-५६॥
Sarvakarmāṇyapi sadā kurvāṇo madvyapāśrayaḥ **/**
Matprasādādavāpnoti śāśvataṃ padamavyayam **//** *18-56* **//**

वह मुझे मिलकर जानलेता है कि मैं तत्त्वतः कौन हूं, और कैसा हूं, वह मुझे जानकर मेरे साथ मेरी कृपा से मेरे शाश्वत पद को प्राप्त हो जाता है।

In that divine state, doing all his duties, always with me, he attains the ultimate state, imperishable, immutable, and eternal. He attains it by the Grace of Divine Me.

चेतसा सर्वकर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः ।
बुद्धियोगमुपाश्रित्य मच्चित्तः सततं भव ॥ १८-५७॥
Cetasā sarvakarmāṇi mayi saṃnyasya matparaḥ **/**
Buddhiyogamupāśritya maccittaḥ satataṃ bhava **//** *18-57* **//**

आत्मा से मेरे परायण होकर, सब कर्मो को मुझे सौंप दे, और बुद्धि योग से मेरे साथ अपना चित्त लगा। सततम् लगा। मेरे साथ रह। मेरा सहारा ले।

Having surrendered all your karmas to me with your mind and soul dedicated to me, taking recourse to Buddhiyoga of knowledge, be dedicated to me with all your mind for all time.

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि ।
अथ चेत्त्वमहङ्कारान्न श्रोष्यसि विनङ्क्ष्यसि ॥ १८-५८॥
Maccittaḥ sarvadurgāṇi matprasādāttariṣyasi **/**
Atha cettvamahaṅkārānna śroṣyasi vinaṅkṣyasi **//** *18-58* **//**

मेरे साथ चित्त लगाकर तुम सारे दु:खों को, सारी कठिनाइयों को पार जाओगे यदि अहंकार के कारण तुम मेरी बात नहीं सुनोगे, तो तुम नष्ट हो जाओगे।

Dedicated to me mentally and spiritually, you will win over all your difficulties with my blessings. And if, for reasons of your self-concentration, you do not listen, you will be destroyed.

यदहङ्कारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे ।
मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति ॥ १८-५९॥
Yadahaṅkāramāśritya na yotsya iti manyase **/**
Mithyaiṣa vyavasāyaste prakṛtistvāṃ niyokṣyati **//** *18-59* **//**

यदि अहंकार के कारण तुम यही मानते रहोगे कि मैं युद्ध नहीं करुंगा, तुम बेकार में यह प्रयास कर रहे हो। प्रकृति स्वयम् तुम्हें विवश कर देगी।

If for your pride of the self you believe that you will not fight, this effort of yours is fruitless, because nature itself will force you to engage yourself in battle.

स्वभावजेन कौन्तेय निबद्धः स्वेन कर्मणा ।
कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात्करिष्यस्यवशोऽपि तत् ॥ १८-६०॥
Svabhāvajena kaunteya nibaddhaḥ svena karmaṇā **/**
Kartuṃ necchasi yanmohātkariṣyasyavaśo'pi tat **//** *18-60* **//**

हे कौन्तेय, तुम स्वभाव से विवश होकर, अपने ही कर्म बन्धन से विवश होकर, मोह के कारण न इच्छा होने परभी, तुम्हें युद्ध तो करना ही पड़ेगा।

Kaunteya, bound by your own karma born of your own nature, if, for some reason of your own delusion, you will not wish to do what you ought to do, you will have to do the same in spite of you.

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ॥ १८-६१॥
Īśvaraḥ sarvabhūtānāṃ hṛddeśe'rjuna tiṣṭhati **/**
Bhrāmayansarvabhūtāni yantrārūḍhāni māyayā **//** *18-61* **//**

हे कौन्तेय, तुम स्वभाव से विवश होकर, अपने ही कर्म बन्धन से विवश होकर, मोह के कारण न इच्छा होने परभी तुम्हें युद्ध तो करना ही पड़ेगा।

Arjuna, the Lord of the universe is present, active at the heart core of all living beings. He moves and whirls around all living beings like parts of a machine (the system) with His power and force.

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥ १८-६२॥
tameva śaraṇaṃ gaccha sarvabhāvena bhārata **/**
tatprasādātparāṃ śāntiṃ sthānaṃ prāpsyasi śāśvatam **//** *18-62* **//**

हे भरतवंशी, उसीकी शरण में जाओ, सर्व भाव से। उसीकी कृपा से परमशांति प्राप्त कर पाओगे।

Take refuge therein, O Bharata, surrender with all your will. By the grace of That, you will certainly find peace, complete and eternal, the ultimate stay.

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया ।
विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु ॥ १८-६३॥
Iti te jñānamākhyātaṃ guhyādguhyataraṃ mayā **/**
Vimṛśyaitadaśeṣeṇa yathecchasi tathā kuru **//** *18-63* **//**

यह ज्ञान है, अत्यन्त रहस्यमय है। इसी को मैंने कह दिया है। अब जैसी तुम्हारी इच्छा है, वैसा करो।

Thus have I spoken to you of knowledge deeper than the deepest. Think over this wholly and fully, and then do as you please.

सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः ।
इष्टोऽसि मे दृढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम् ॥ १८-६४॥
Sarvaguhyatamaṃ bhūyaḥ śṛṇu me paramaṃ vacaḥ **/**

Iṣṭo'si me dṛḍhamiti tato vakṣyāmi te hitam **//** *18-64* **//**

और सर्वरहस्यमय मेरी परमवाणी सुनो। तम मेरे पक्के इष्ट हो, इसलिये तुमको यह सब कहा है। तुम्हारे भले के लिये कहा है।

Still, listen to me for the finish, the final word, again, this is the most secret and most sacred of all: You are dear to me for sure; hence I shall speak of it for your good.

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ॥ १८-६५॥
Manmanā bhava madbhakto madyājī māṃ namaskuru **/**
Māmevaiṣyasi satyaṃ te pratijāne priyo'si me **//** *18-65* **//**

मुझसे मन लगा, मेरा साथी बन, मेरा भजन कर, मुझे नमस्कार कर, मुझमें ही मिल जायेगा। तुमको वचन देता हूं, तुम मेरे प्रिय हो, विश्वास करो।

Be with me with all your mind and soul, dedicated to me, offer all your acts of yajna to me, bow to me in obseisance. And you will come to me, it is true, and I promise, you are ever dear to me.

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥ १८-६६॥
Sarvadharmānparityajya māmekaṃ śaraṇaṃ vraja **/**
Ahaṃ tvā sarvapāpebhyo mokṣayiṣyāmi mā śucaḥ **//** *18-66* **//**

सब धर्म त्याग दो, मेरी शरण में आजाओ, मै तुमको सब पापां से बचालूंगा ।

After all your Dharmas and all your Karmas, come to me, I shall save you against all your sins, do not worry.

इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन ।
न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति ॥ १८-६७॥
Idaṃ te nātapaskāya nābhaktāya kadācana **/**
Na cāśuśrūṣave vācyaṃ na ca māṃ yo'bhyasūyati **//** *18-67* **//**

यह रहस्यमय ज्ञान, किसी अतपस्वी को न देना, न कभी अभक्त को देना, सुनने की इच्छा वाले को ही देना, अनिच्छा वाले को नहीं, जो मेरी बुराई करे उसको भी नहीं।

This is for you, not for anyone without tapas, not for anyone undedicated, never, not to be spoken to anyone who does not want to listen, not for anyone who slanders me.

य इदं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति ।

भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः ॥ १८-६८॥
Ya idaṃ paramaṃ guhyaṃ madbhakteṣvabhidhāsyati **/**
Bhaktiṃ mayi parāṃ kṛtvā māmevaiṣyatyasaṃśayaḥ **// *18-68* //**

जो कोई इस परम रहस्य ज्ञान को मेरे भक्त को सुनायेगा, कहने वाला और सुनने वाला मेरी भक्ति करके मुझसे ही मिल जायेगा। इसमें कोइ संशय नही है।

Whoever will speak of this most sacred and highest meaningful word to my devotees, he will do the highest homage to me and surely then come to me.

न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः ।
भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि ॥ १८-६९॥
Na ca tasmānmanuṣyeṣu kaścinme priyakṛttamaḥ **/**
Bhavitā na ca me tasmādanyaḥ priyataro bhuvi **// *18-69* //**

मेरे लिये कोइ भी भक्त, उससे बढ़कर मेरी सेवा करने वाला नहीं होगा। मुझसे प्रेम करने वाला भी न है, न होगा। सारी पथवी पर नहीं।

And for this reason, there is none among men who can do a better service to me, and there will not be anybody on earth dearer than he to me.

अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः ।
ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः ॥ १८-७०॥
Adhyeṣyate ca ya imaṃ dharmyaṃ saṃvādamāvayoḥ **/**
Jñānayajñena tenāhamiṣṭaḥ syāmiti me matiḥ **// *18-70* //**

जो कोई मेरे और अर्जुन के इस धम संवाद का अध्ययन करगा, उसके इस ज्ञान यज्ञ के कारण मैं उसका इष्ट देव हूँगा, यह मेरा विचार है।

And whoever will read this secret dialogue on Dharma between you and me, by him I shall be honored and pleased with his reading as the yajna of knowledge. This is my view of the reader.

श्रद्धावाननसूयश्च शृणुयादपि यो नरः ।
सोऽपि मुक्तः शुभाँल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम् ॥ १८-७१॥
Śraddhāvānanasūyaśca śṛṇuyādapi yo naraḥ **/**
So'pi muktaḥ śubhā~llokānprāpnuyātpuṇyakarmaṇām **// *18-71* //**

जो कोई श्रद्धा से, और अदोष दृष्टि से, इस संवाद का श्रवण करेगा, वह भक्त भी शुभ और पुण्य कम वाले मुक्त लोकों की प्राप्ति करेगा।

And whoever the man of faith and devotion, who is respectful and non-slanderous, who will hear it, he too will achieve moksha and will attain to the regions of the holy men of of noble karma.

कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चेतसा ।
कच्चिदज्ञानसम्मोहः प्रनष्टस्ते धनञ्जय ॥ १८-७२॥
Kaccidetacchrutaṃ pārtha tvayaikāgreṇa cetasā **/**
Kaccidajñānasammohaḥ pranaṣṭaste dhanañjaya **//** *18-72* **//**

अर्जुन, क्या तुमने एकाग्रचित होकर इस संवाद को सुना? हे धन्नजय, क्या अज्ञान से उत्पन्न मोह इस संवाद से नष्ट हुआ?

Dhananjaya, have you listened to this message with care and single mind? Partha, is your delusion born of ignorance gone away?

अर्जुन उवाच ।
नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत ।
स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव ॥ १८-७३॥
Arjuna uvāca **/**
Naṣṭo mohaḥ smṛtirlabdhā tvatprasādānmayācyuta **/**
Sthito'smi gatasandehaḥ kariṣye vacanaṃ tava **//** *18-73* **//**

अर्जुन ने कहा:

हे अविनाशी देव, मेरा मोह नष्ट हो गया, स्मृति सम्प्राप्त हुई, आपके कृपा प्रसाद से मेरी मनस्थिति स्वस्थ है, कोई संदेह नही। जो कहो सो करुंगा।

Says Arjuna:
Lord Infallible and Eternal, my delusion is gone, my mind and memory of the real self is regained by your grace. I am now my proper self, all doubts and questions are gone. I shall now do your bidding, yes, I will.

सञ्जय उवाच ।
इत्यहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महात्मनः ।
संवादमिममश्रौषमद्भुतं रोमहर्षणम् ॥ १८-७४॥
Sañjaya uvāca **/**
Ityahaṃ vāsudevasya pārthasya ca mahātmanaḥ **/**
Saṃvādamimamaśrauṣamadbhutaṃ romaharṣaṇam **//** *18-74* **//**

संजय ने धृतराष्ट्र से कहा:

मैने महात्मा कृष्ण और वीर अर्जुन का संवाद सुना, अद्भुत रोमांच करदेने वाला।

Says Sanjaya:
I have heard this dialogue of the Great soul Vasudeva and the great hero Partha. Unique it is, unheard, inspiring.

व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद्गुह्यमहं परम् ।
योगं योगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयम् ॥ १८-७५॥
Vyāsaprasādācchrutavānetadguhyamahaṃ param **/**
Yogaṃ yogeśvarātkṛṣṇātsākṣātkathayataḥ svayam ***// 18-75 //***

महऋषि व्यास की कृपा से सुना। अत्यंत रहस्यमय, जैसा योगेश्वर कृष्ण ने सवयम् कहा, मैने यह योग सुना। महात्मा कृष्ण ने सवयम् सुनाया।
By the grace of the sage Vyasa, I have heard this most secret and most sacred message of yoga from Yogeshwara Krishna, himself speaking directly.

राजन्संस्मृत्य संस्मृत्य संवादमिममद्भुतम् ।
केशवार्जुनयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः ॥ १८-७६॥
Rājansaṃsmṛtya saṃsmṛtya saṃvādamimamadbhutam **/**
Keśavārjunayoḥ puṇyaṃ hṛṣyāmi ca muhurmuhuḥ ***// 18-76 //***

हे राजन, कृष्णाअर्जुन के इस संवाद को सुनकर, अद्भुत् संवाद को याद करके, मैं बार बार प्रसन्न होता हं।
O King, remembering and recalling this holy wonderful dialogue between Arjuna and Keshava, so unique and rare, I rejoice and celebrate again and again.

तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः ।
विस्मयो मे महान् राजन्हृष्यामि च पुनः पुनः ॥ १८-७७॥
Tacca saṃsmṛtya saṃsmṛtya rūpamatyadbhutaṃ hareḥ **/**
Vismayo me mahān rājanhṛṣyāmi ca punaḥ punaḥ ***// 18-77 //***

राजन, योगेश्वर कृष्ण के रूप को याद करके मैं बार बार प्रसन्न होता हं ।
O King, remembering, recollecting, and re-enacting that universal form of the Lord of Bliss, never seen before, I am struck with wonder and I rejoice again and again.

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥ १८-७८॥
Yatra yogeśvaraḥ kṛṣṇo yatra pārtho dhanurdharaḥ **/**
Tatra śrīrvijayo bhūtirdhruvā nītirmatirmama ***// 18-78 //***

जहां योगेश्वर कृष्ण हैं, जहां धनुर्धर पार्थ हैं, वहां ही शिवम् होगा, धनसम्पत्ति होगी। विजय होगी। ध्रुवनीति वहीं होगी। यह मेरा निश्चित विचार है।

Whenever there is Yogeshwar Krishna and wherever there is Partha, hero of the bow and arrow, there is grace, there is victory, there is power and prosperity, there is policy determined, firm, and unshakable. This is what I believe, for sure.